राष्ट्र सेवा दल – पंचसूत्र

समाजवाद

भाई वैद्य

:: प्रकाशक::

वाङ्.मय विभाग

राष्ट्र सेवा दल

समाजवाद

भाई वैद्य

:: प्रकाशक::

वाङ्मय विभाग

राष्ट्र सेवा दल

❖ राष्ट्र सेवा दल – पंचसूत्र

❖ समाजवाद

❖ लेखक : भाई वैद्य

❖ राष्ट्र सेवा दल

❖ प्रथम आवृत्ति
1 अप्रैल 2003

एसेम स्मृतिदिन

❖ प्रकाशक :
वाङ्मय विभाग,

राष्ट्र सेवा दल,

साने गुरूजी स्मारक

सिंहगड रस्ता–पुणे–30

❖ अक्षर योजना
शामला कवडी

❖ मुद्रक : साधना प्रेस
431 शनिवार पेठ,

पुणे 411030

❖ मूल्य : रू. 20

प्रस्तावना

कार्यकर्ताओं के वैचारिक पोषण के लिए राष्ट्र सेवादल के वाङ्.मय विभाग द्वारा सेवादल पंचसूत्रों पर पुस्तिकाएं प्रकाशित की जा रही हैं। जनतंत्र, राष्ट्रवाद और वैज्ञानिक दृष्टिकोण इन तीन विषयों पर लिखी हुई पुस्तिकाएं सेवा दल के हीरक महोत्सव में, 12 नवंबर 2002 को एस. एम. जयंती के अवसर पर प्रकाशित हुई। अब राष्ट्र सेवा दल के राष्ट्रीय अध्यक्ष मा. भाई वैद्यजी द्वारा'समाजवाद' विषय पर लिखी गयी पुस्तिका एस.एम. के पुण्य तिथि के अवसर पर प्रकाशित हो रही है।

सभी जानते हैं कि समताधिष्ठित समाजनिर्मिति का उद्दिष्ट रखने वाले सेवा दल जैसे संगठन के लिए कार्यकर्ताओं का वैचारिक विश्व समृद्ध करने की कितनी जरूरत है। वाङ्.मय विभाग निरंतर इसी जरूरत को पूरा करने का प्रयास करेगा। इस बारे में सभी सेवा दल सैनिकों के सुझावों का स्वागत है।

इस पुस्तिका को थोड़े समय में सफलता पूर्वक वास्तविक रूप देने में स्वयं लेखक, मुद्रित शोध करनेवाले, महाराष्ट्र भाषा सभा के कार्यध्यक्ष एवं ज्येष्ठ प्रा. सु.मो.शाह, अक्षर योजना करनेवाली शामला कवड़ी इन सभी के योग्य दिशा में किए हुए अथक प्रयास सहायक हैं। मैं इन सभी का बहुत ही आभारी हूँ।

सेवा दल सैनिकों को मेरा अनुरोध है कि वे ये पुस्तिकाएं जरूर पढ़ें, अपने सुझाव दें और सेवा दल को सशक्त बनाने के इस प्रयास में अपना योगदान दें।

धन्यवाद !

1 अप्रैल 2003

सुभाष वारे

प्रमुख, वाङ्.मय विभाग

राष्ट्र सेवा दल

अनुक्रम

1) भारत की आज की स्थिति .....

2) भारत की स्थिति पर विविध उपाय ....

3) समाजवादी विचार – कुछ सवाल ....

4) समाजवादी आंदोलन का इतिहास (यूरोप और भारत) .....

5) भारतीय समाजवादी आंदोलन का इतिहास

6) भारतीय समाजवाद के सामने चुनौतियाँ.....

7) आज मुकाबला किससे ? .....

8) समारोह .....

1. भारत की आज की स्थिति

राष्ट्र सेवा दल की पंचसूत्री में समाजवाद का सूत्र अहम महत्व रखता है। भारतीय संविधान ने मूल्यों का निर्धारण करते समय जनतंत्र एवं धर्मनिरपेक्षता या इहवाद के साथ समाजवाद का मूल्य जोड़ा है। बीसवें शतक के दूसरे दशक से ही भारत में समाजवाद की बहस शुरू हुई। कॉंग्रेस के अत्युच्च नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू ने समाजवाद का नारा दिया, डांगेजी ने 1925 में कम्युनिस्ट पार्टी कायम की और लोकनायक जयप्रकाश जी ने समाजवादी पक्ष 1934 में कायम किया तथा डॉ. आंबेडकर जी ने 'राज्य समाजवाद' पेश किया उसके बाद समाजवाद की चर्चा पूरे देश में दूर दराज में फैलने लगी। **राष्ट्र सेवा दल की पहचान समाजवाद के नाम से है**। पूरे संसार में राष्ट्र सेवा दल को जाननेवाले उसको समाजवादी युवा संघटन के रूप में ही जानते हैं। इसलिए समाजवाद के सूत्र के बारे में गहराई में जाकर चिंतन आवश्यक है।

समाजवाद के सूत्र के बारे में चिंतन करने से पहले आज भारत की स्थिति कैसी है? और यह दुःस्थिति कौन–सी विचारधारा से या कौन–सा रास्ता अपनाकर दूर की जा सकती है, यह देखना बहुत जरूरी है। यदि किसी विचारधारा से देश का सपना पूरा नहीं हो सकता, तो उस विचार धारा का क्या उपयोग?

भारत में लगभग आबादी का आधा हिस्सा गरीबी रेखा के नीचे सड़ रहा है। लगभग 15 करोड़ लोग बेरोजगारी के चंगुल में फँसे हैं, पढ़े–लिखे जवानों को भी रोजगार मिलने का भरोसा नहीं है। आर्थिक उदारीकरण के प्रयोग शुरू होने के बाद पिछले 12 साल से रोजगारों में वृद्धि होने की बजाय कमी आई है। 5 लाख कल कारखाने बंद हैं और जो औद्योगिक कारखाने काम कर भी रहे हैं, वह अपने यहां नये–नये यंत्रों का प्रयोग कर कामगारों की संख्या कम करते रहते हैं। खडकी ॲम्युनेशन फैक्टरी में जहाँ 25 हजार मजदूर थे, वहाँ अब केवल 5 हजार मजदूर नये यंत्रों की सहायता से दुगुना उत्पादन करते हैं। सरकारी दफ्तरों में नयी रोजगार भरती बंद हो गयी है। निजीकरण का दौर चलने की वजह से बेरोजगारी को और बढ़ावा मिला है। इतना ही नहीं,

सामाजिक न्याय का तत्व नजरअंदाज किया जा रहा है। सामाजिक न्याय के लिए आरक्षित जगहें, शिक्षा और रोजगार में रखने की नीति, बंद हो रही है और उसका बुरा असर बहुजन समाज पर हो रहा है। सबसे बुरी स्थिति किसानों की है। भूमि पर अवलंबित आबादी के 70 फीसदी भूमि पानी के बिना तड़प रही है। ऐसी स्थिति में नये आर्थिक धोरण का प्रयोग नदियों का निजीकरण करने पर तुला हुआ है। अब तक कुछ नदियाँ राज्य शासनों ने कंपनियों को रॉयल्टी पर दे दी हैं। विदेश से सस्ता अनाज, सस्ता फल और सस्ता दूध आने की वजह से किसान को अपनी फसल का उचित दाम नहीं मिल रहा है और समर्थन मूल्य से भी कम दाम में उनको अपना उत्पादन बेचना पड़ रहा है। मुद्रा नीति और विश्व बैंक किसानों की सब्सिडी बंद करने के प्रयास में जुटे हैं। इतना ही नहीं, सार्वजनिक खाद्य वितरण प्रणाली भी नष्ट की जा रही है। भारत में पिछले दो सालों में हजारों किसानों ने आत्महत्या की यह घटना खतरे का इशारा है। किसान की जमीन धनवान कंपनियों को बेचने और भूमि पर किसानों की संख्या को कम करने की साजिश हो रही है। शिक्षण प्रणाली का सत्यानाश हो रहा है। बहुजन समाज के बच्चे अभी–अभी उच्च शिक्षा लेने को तैयार हुए हैं, तो वहाँ से शासन हट रहा है। पहले ही शिक्षा पर राष्ट्रीय संपत्ति का केवल 3 फीसदी व्यय किया जा रहा है। वह भी कम करने की कोशिश है। शिक्षा प्रणाली से शासन हटेगा, तो फीस बढ़ जायेगी और गरीब तबके के लिए शिक्षा प्राप्त करना असंभव बन जायेगा। दवा के क्षेत्र का पहले से ही निजीकरण है और अभी शासन के जरिये जो रूग्णालय चल रहे हैं, वे कम करने का प्रयास जारी है। हमारे जैसे देश में प्रति वर्ष मलेरिया से 35 लाख लोग मरते हैं यह कितनी शर्मनाक बात है। नोबल पारितोषिक विजेता डॉ. अमर्त्य सेन कहते हैं कि जिन देशों ने आर्थिक प्रगति की है, उसका कारण उन देशों के शिक्षा एवं आरोग्य की प्रगति में है। लेकिन, अपने देश में सब उलटा–पुलटा हो रहा है। नदी पर बड़े–बड़े बाँध बनाये जाते हैं और करोड़ों आदिवासियों को विस्थापित किया जाता है और शासन चाहे जो कहे, उनके पुनर्वास की जिम्मेवारी नहीं निभाते हैं। ऐसी स्थितियों में दलितों पर अत्याचार और स्त्री अत्याचार की मात्रा बढ़ रही है। देश की किसी भी आपत्ति का सबसे प्रभाव महिला,

दलित और आदिवासियों तथा गरीबी रेखा के नीचे रहनेवालों पर होता है, दूसरी तरफ गरीबों को कुपोषण और भुखमरी का सामना करना पड़ता है। शासकीय गोदामों में करोडों टन अनाज है, लेकिन करोडों भूख पीडित, कुपोषित, गर्भवती माताएँ तथा बच्चे अनाज को मोहताज हैं। विषमता की खाई प्रतिदिन बढ़ रही है। बेबसी, दयनीयता, दारिद्र्ता, बेरोजगारी, कुपोषण और भूखमरी जैसी समस्याओं से पूरा बहुजन समाज आक्रांत है। ऐसी स्थिति में सत्तापिपासु राजनैतिक लोग धर्मांधता, दहशतवाद, युद्ध का खतरा तथा भावनिक उन्माद पैदा करके अपना उल्लू सीधा करने में तुले हुए हैं। भारत में ऐसी ही स्थिति रहेगी तो भारत को अर्जंटीना होने में देर नहीं लगेगी। इस स्थिति का सामना कैसे किया जा सकता है, यह सबसे बड़ा सवाल है। राष्ट्र सेवा दल का हर सैनिक इसपर विचार करता है और सर्वशक्ति से डटकर सामना करने के लिए तैयार हो जाता है। एक सिद्धान्त ऐसा है कि जिस तरह पानी पर बांध बना देने से पानी सब जगह पहुँचता रहता है, उसी तरह से एक स्थान पर राष्ट्रीय संपत्ति का बाँध बना देना चाहिए जिससे संपत्ति अपने–आप ही निचले स्तर तक चली जायेगी लेकिन ऐसा होता नहीं, भारत में ब्रिटिशों के आने के बाद यहाँ के ब्राह्मणों ने उनको यही सिद्धान्त बताया कि सबसे पहले उच्चवर्णियों को उच्च शिक्षा दे दो फिर वह शिक्षा अपने आप ही आखिर तक पहुँच जायेगी। लेकिन आज तक शिक्षा बहुजन समाज तक नहीं पहुंच पायी है। इसमें सिद्धान्त है, ''जो हाजिर वह वजीर''। संपत्ति के बारे में तो यह सिद्धान्त और कड़ाई से लागू होता है और ''जिसकी लाठी उसकी भैंस'' ऐसा देखने को मिलता है। संपत्ति का बाँध बनते हुए सबको दिखता है लेकिन नीचे का तबका उससे हमेशा अछूता रह जाता है और गरीबी में सड़ कर मरता है। राष्ट्र सेवा दल को यह सिद्धान्त कतई मंजूर नहीं है।

2. भारत की स्थिति पर विविध उपाय

जब हम ऐसी स्थिति पर उपायों की चर्चा करते हैं, तब कई लोग कहते हैं कि उपाय के लिए विचारों की गुलामी क्यों। इसमें यह तथ्य है कि यदि विचारधारा गतिशील न हो, उसमें परिस्थिति के अनुसार बदलने की क्षमता न हो तो वह विचारधारा एक बोझ और उपाय के बदले रास्ते में रोड़ा बन जाती है। लेकिन, विचारधारा न हो ऐसा कहने वाले और व्यावहारिकता का तर्क देने वाले सभी लोग प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष आज के पूंजीवाद के समर्थक बन जाते हैं। पूँजीवाद भी एक विचारधारा है, न कि कोई व्यावहारिक उपाय। पूँजीवाद के तर्क का आधार यह है कि हर व्यक्ति को लाभ की आर्थिक प्रेरणा दे दो, उनकी गाड़ी अपने आप ही आगे बढ़ती जायेगी। इतना ही नहीं, जैसे मैदान में खेल प्रतियोगिता होती है और उससे गुणवत्ता बढ़ती रहती है, वैसे ही आर्थिक क्षेत्र में खुली प्रतियोगिता रखने से धनसंचय बढ़ता जायेगा, उसमें ज्यादा गुणवत्ता आयेगी और सभी एक–दूसरे से स्पर्धा करेंगे, तो राष्ट्र संपन्न बन जायेगा। यह जाहिर है कि संसार में सबसे धनवान राष्ट्र अमेरिका है। लेकिन, वहाँ 12 फीसदी लोग अर्थात 3 करोड़ आबादी, जिसमें ज्यादा से ज्यादा नीग्रो और परित्यक्ता महिलाएँ हैं, वे वहाँ की गरीबी रेखा के नीचे क्यों, यह सवाल पैदा होता है! जैसे हमारे देश के अनाज भंडार भरे हुए हैं, लेकिन दूसरी तरफ कुपोषित बच्चे और गर्भवती माताएँ मर रही हैं वैसे ही अमेरिका में फोर्ड, रॉक फेलर, बिल गेट्स जैसे कई राष्ट्रों को खरीदने की क्षमता रखने वाले धनवान हैं, लेकिन फिर भी वहाँ 3 करोड़ लोग भूखे क्यों? जिस तरह से अमेरिका ने अपने निजी स्वार्थ के लिए इराक पर हमला करने की घोषणा की और वहाँ के लाखों बच्चों को मृत्यु के घाट उतारा, वो सब क्यों? पूँजीवाद यह एक बहुत ही घातक विचारधारा है फिर चाहे वह मुक्त बाजारपेठ, मानवाधिकार, जनतंत्र जैस बड़े–बड़े उसूलों की स्वर में घोषणा ही क्यों न करते हों। अमेरिका प्रभुसत्ता होने की वजह से राष्ट्र संघ को भी सम्मान नहीं देता। इतना ही नहीं वह चहाता है कि पूरे संसार की अर्थरचना अपनी मुट्ठी में हो, उसके लिए विश्व बैंक और मुद्रानिधि का उपयोग किया जाए और सभी विकासशील देश शायद अवनति की ओर भी चले जाएं

उसकी उसे कुछ परवाह नहीं। अमेरिका आज अंतर्राष्ट्रीय पूँजीवाद का नेतृत्व कर रहा है। अमेरिका का डॉलर पूरे संसार में प्रमाणित चलन बन गया है जिससे अन्य राष्ट्रीय चलन की कीमत और हैसियत नहीं के बराबर है। अमेरिका संसार के सभी राष्ट्रों में बलपूर्वक अपने पूँजीवाद का प्रयोग कर रहा है। अमेरिका ने सभी को गॅट पर हस्ताक्षर करना अनिवार्य बनाया। उसके कारण गरीब देशों के किसान विकास नहीं कर पा रहे हैं। हमारे देश में तो हजारों किसानों ने खुदखुशी कर ली। संसार के पीड़ित लोग आक्रांत हैं और जगह–जगह करोड़ों की तादात में अमेरिका के विरोध में प्रदर्शन कर रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय मुक्त बाजार की वजह से सभी गरीब देशों का किसान वर्ग पूरी तरह असुरक्षित बन गया है। तंत्रविज्ञान, हस्तांतरण के नाम से विकसित देशों की बड़ी–बड़ी मशीनें, गरीब देशों में घुस रही हैं और बहुत बड़ी मात्रा में कामगारों के हाथ छाँट रही हैं। अमरिका में भी बेरोजगारी बढ़ रही है, लेकिन बेरोजगारी से गरीब देश तबाह हो रहे हैं। ऐसी आर्थिक स्थिति स्थापित की जा रही है कि पूर्व एशिया के कई संपन्न देशों को थोड़ी अवधि में अपनी अर्थव्यवस्था की इमारत गिरते देखना पड़ा। जिस देश में सबसे ज्यादा जरूरत हर व्यक्ति के पास रोजगार के जरिये क्रयशक्ति देने की है, भारतीय शासन ने वहाँ पूँजीवाद का प्रयोग शुरू किया है। पूर्व राष्ट्रपति श्री के.आर नारायणनजी ने कहा कि, उदारीकरण, निजीकरण और जागतिकीकरण के फास्ट लेन ट्रॅफिक से सामान्य आदमी असुरक्षित हो रहा है। शिक्षा, आरोग्य की समस्या है और यहां जिस तरह से एल.पी.जी. का प्रयोग हो रहा है उसकी वजह से गरीब तबके को वहाँ से पूरी तरह से हटने को मजबूर किया जा रहा है। पूँजीवाद का प्रयोग बढ़ता जा रहा है पूंजीवाद हमेशा से अपनी सुरक्षा के लिए युद्ध का उपाय ढूँढता रहता है जो प्रयोग न केवल भारत के लिए खतरनाक है बल्कि पूरे संसार को धोखा देने वाली बात है। हमें उस प्रयोग से बचना होगा क्योंकि उसी प्रयोग ने हम पर 150 साल की गुलामी लादी थी। फिर उन्हीं प्रयोगों द्वारा वह सम्राज्यवाद के रूप में वही गुलामी हम पर दोबारा लादना चाहता है।

संघ का गिरोह जिसमें भाजपा, वि.हिं. परिषद, वनवासी आश्रम, भारतीय मजदूर संघ, विद्यार्थी परिषद, संस्कार भारती आदि कई प्रकार की संघटनाएँ हैं, वह 1925 से लेकर आज तक एक ही उपाय बता रहा है। वह उपाय भारत में हिंदू राष्ट्र निर्मिति का है। संघ के लोगों की यह विशेषता है कि उनके कई मुंह हैं वो अलग–अलग मुंह से अलग–अलग बात कहते रहते हैं। कभी वह हिंदू राष्ट्र की भाषा बोलेंगे तो कभी हिंदू संस्कृति की भाषा बालेंगे। कभी धर्मराष्ट्र की आवाज देंगे, तो कभी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की घोषणा करते रहेंगे। कभी 3 मस्जिदें गिराने का आग्रह करेंगे, तो कभी 3000 मस्जिदें गिराने की बात करेंगे। कभी ये नारा देंगे कि 'महात्मा गांधी प्रातः स्मरणीय है और हम गांधीयन समाजवादी हैं', तो कभी ये कहते हैं कि गांधीजी की अहिंसा ने देश को दुर्बल बनाया और उनको राष्ट्रपिता कहना गलत है यह भी वे लोग कहते रहेंगे। कभी कहेंगे कि यहाँ धर्माधिष्ठित राष्ट्र कभी हो नहीं सकता, तो कभी कहेंगे कि, इस्लाम आक्रमक धर्म है और वह संस्कृति के पूरे विरोध में है। यहाँ की शिक्षापद्धति को तोड़ मरोड़कर, इतिहास बदलकर वे बच्चों पर अपने जातिवादी विचारों का संस्कार करने का प्रयास कर रहे हैं। इतिहास की क्रमिक पुस्तकों में गांधीजी के जन्म का वर्णन है लेकिन मृत्यु का जिक्र नहीं है, क्योंकि फिर उनको गोडसे की निंदा करना अनिवार्य हो जाता।

संघ प्रणाली पूरी तरह पूँजीवाद का समर्थन करने वाली है। इसलिए उनकी अमेरिका से साठ–गाँठ हो गई है और वो पूरी शक्ति के साथ यहां एल.पी.जी का अमेरिकी प्रयोग करने का विचार बना रही है। उन लोगों ने जिस तरह से एन्रॉन का सर्मथन किया वह हमारे सामने है। संघ की अलग–अलग संस्थाओं की आवाज अलग–अलग क्यों न हो, उनकी असली आवाज सरसंघचालक सुदर्शनजी की आवाज से ही पहचानी जाती है। उन्होंने खुले आम कहा है कि इस देश में हिंदू और गैर–हिंदुओं में महाभारतकालीन जैसा महायुद्ध होनेवाला है जिसके लिए हिंदुओं को शस्त्रों से लैस होना अनिवार्य है। उनके परम शिष्य नरेंद्र मोदी ने सत्ता के जरिये उसका बहुत ही अमानवीय और पाशवी प्रयोग गुजरात में किया। उससे संघ का असली चेहरा सामने

आ गया है। गुरू गोलवलकरजी कहते थे कि हमें हिटलर से सबक लेना जरूरी है। मोदी ने गुजरात में हिटलरी अर्थात फॅसिझम का प्रयोग किया। इन संगठनों के मन में उसी प्रयोग को गुजरात सहित पूरे देश में करने का विचार है। वे इससे गृह युद्ध निर्माण करने का प्रयास करेंगे, उन्हें जनतंत्र से हिंदू राष्ट्र पैदा करने की संभावना नहीं लगती, वे इस काम को गृह युद्ध से हासिल करने का प्रयोग जरूर करेंगे। लेकिन, संसार में कई धर्माधिष्ठित राज बन गये और उसका परिणाम वहाँ के नागरिकों को भुगतना पड़ा। जिस तरह से पाकिस्तान में इस्लामी राज्य कायम होने के बाद वहां के मौलवियों ने मुसलमान कौन की चर्चा छेड़ी वैसे ही यदि यहाँ हिंदू राष्ट्र होगा, तो लोग संसद खत्म करके धर्म संसद के संत–महंत असली हिंदू कौन आदि की चर्चा करना शुरू करेंगे। यह तो फॅसिझम का रास्ता है। हिंदू राष्ट्र निर्मिति का प्रयास करनेवाले लोग यहाँ की गरीबी, बेबसी, बेरोजगारी, किसानों की आत्महत्या, खतरनाक जातिप्रथा आदि प्रश्नों की चर्चा नहीं करते क्योंकि उनकी दृष्टि से यह बहुत मामूली और साधारण प्रश्न है। लोगों के असली प्रश्न उनको मामूली प्रश्न लगते हैं और वो भावनात्मक उन्माद पैदा करते हैं ताकि लोगों को भी उनके प्रश्न असली लगने लगें जिससे वो हमेशा इस प्रयास में रहते हैं कि लोग भी अपने असली प्रश्न भूल जायें। इस देश की परिस्थिति का उपाय ऐसी विचारधारा में कतई नहीं मिल सकता। इतना ही नहीं, यह विचारधारा इस देश को खत्म करनेवाली, विभाजित करनेवाली और हिंसा की आग में नष्ट करनेवाली साबित हो सकती है। इसलिए तो राष्ट्र सेवा दल ने जागतिकीकरण के साथ जातिवाद के खिलाफ जूझने का प्रण किया है।

कुछ लोगों को लगता है, इस देश की दुःस्थिति पर एकमात्र उपाय है, 'तानाशाही'। इन लोगों का विचार है कि तानाशाही अपने हंटर से सब खामियाँ समाप्त करेगी, लोगों को काम पर लगायेगी, हर काम समय पर और अच्छी तरह से हो पायेगा। द्वितीय महायुद्ध तक यह विचारधारा पूरे संसार में काफी फैली थी, लेकिन जिस तरह हिटलर और मुसोलिनी के कारण जर्मनी और इटली बरबाद हो गये, इतना ही नहीं उनके कारण संसार के कम से कम 10 लाख लोग मारे गये यह देखकर लोगों का भ्रम दूर हो

गया। हिटलर ने जिस तरह ज्यू जमात के खिलाफ भावनिक उन्माद खडा किया और जर्मन की दुर्बलता का एकमात्र कारण ज्यू संस्कृति है यह बताकर होलोकॉस्ट में 60 लाख ज्यू का कत्लेआम किया, यह देखकर हिटलर का नामोनिशान मिट गया। आज जर्मनी में सबसे घृणित व्यक्तित्व हिटलर है, और जर्मनी के युवकों का हीरो मोहन दास कर्मचंद गांधी है। लेकिन भारत में अभी भी हिटलर का आकर्षण कम नहीं हुआ। खासकर के हिंदुत्व विचार के लोग अब भी हिटलर बनने की आकांक्षा रखते हैं। पूरे संसार में जनतंत्र प्रणाली फैल रही है, जहाँ 1860 में जनतंत्र प्रणाली के एक दो ही देश थे वहाँ अब रॉबर्ट डाल्ह के अनुसार 65 देश जनतंत्रवादी बन गये हैं। दुर्भाग्य से यहाँ के जनतंत्र को दुर्बलता का प्रतीक मानकर कुछ विकृत मनोवृत्ति के लोग तानाशाही का समर्थन करते रहते हैं। हमारे पड़ोस में पाकिस्तान को पीछे–पीछे ले जा रहा है। जनतंत्र की वजह से दबे हुए लोगों को मतदान के रूप में आवाज मिलती है। वह आवाज भी दबा दी जायेगी, तो वे हमेशा ही पाँव के नीचे कुचले जायेंगे। जनतंत्र की वजह से ही भारत का बहुजन समाज कुछ प्रगति कर रहा है। हजारों साल चातुर्वर्ण्य के आधार पर उच्चवर्णीय जिनको दबाते आये, वे लोग अभी ज्यादा जुल्म जबरदस्ती कतई कबूल नहीं करेंगे। नीची मानी गई जातियाँ भी अपना सर उठा रही हैं। अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को भी जनतंत्र की वजह से कुछ सुरक्षा मिल पाती है। इतना ही नहीं शोषित जनों से असली सवालों पर बोलना शासक वर्ग को अनिवार्य बन जाता है। अभी भी घपले होते रहते हैं, लेकिन तानाशाही में उनकी जैसी अनदेखी होती है, वैसा जनतंत्र में नहीं होती। जनतंत्र में गलतियां सुधारने का अवसर जनता और राज्यकर्ताओं को मिलता है, जो तानाशाही में नही मिलता। इसलिए तानाशाही का उपाय करना अर्थात दवा रोग से भी ज्यादा खतरनाक बन जायेगी जिसे हमेशा ध्यान में रखना अनिवार्य है।

साम्यवादी विचार के कुछ लोग समाजवादी क्रांति का नारा देते हैं। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कामगारों की तानाशाही के नाम पर रूस में मार्शल स्टालिन की तानाशाही का निर्माण हो गया और करोड़ो लोगों की हत्याएँ हो गईं। पूर्व यूरोप के कई

साम्यवादी देशों में तानाशाही सलतनतें पैदा हुईं, जिससे उन देशों का अपार नुकसान हो गया, जो हमारे सामने है। इसलिए साम्यवादी लोग जबतक जनतंत्र पर अपनी निष्ठा का ऐलान नहीं करते और कामगार तानाशाही (डिक्टेटरशिप ऑफ द प्लुरिटेरिएट) के नाम पर अपनी पार्टी की तानाशाही कायम करना चाहते हैं, या विरोधी दलों को काम करने का सही अधिकार नहीं देते, तब तक यह उपाय भी विनाश की और ले जानेवाला है। क्रुश्रेव ने सत्ता पर आने के बाद स्टालिन के कई कुकर्म जाहिर किये और गोर्बाचेव ने स्टालिन के जरिये 10 करोड़ लोगों की हत्याएँ कैसी हुईं इसका गोप्यस्फोट किया। कुश्रेव ने जब स्टालिन के कुकर्मों की फेहरिस्त दे दी, तब कम्युनिस्ट कॉंग्रेस में किसी ने पूछा कि आपने विरोध क्यों नहीं किया। क्रुश्रेवने आवाज उठानेवाले को खड़े रहने को कहा, लेकिन कोई खड़ा नहीं रहा। इसलिए क्रुश्रेवने ने कहा कि, ''जिस लिए आप चुप हैं उसी लिए मैं चुप रहा''। ऐसे इतिहास का पुनर्निमाण भारत में हमें नहीं करना चाहिए यह राष्ट्र सेवा दल की मनोकामना है।

इसलिए राष्ट्र सेवा दल के सैनिकों को लगता है कि भारत की इस स्थिति में लोकतांत्रिक समाजवाद एकमात्र उपाय है। बड़े समाजवादी नेता श्री मधु लिमये जी ने अपनी ''सोशलिस्ट–कम्युनिस्ट इंटर ॲक्शन इन इंडिया'' किताब के अंत में लिखा है कि '' इसका निष्कर्ष एक ही है, भारत और दक्षिण एशिया और तीसरी दुनिया में जो भयंकर गरीबी है, उसका परिहार न पुराने तरीके के साम्यवादियों से होगा, न संसार में अपना रोब दिखानेवाले पूँजीवाद से होगा। अपना भविष्य हमें अपने कष्ट के आधार पर बनाना होगा। देश की पूरी अर्थव्यवस्था शासन के हाथ में शासनविहीन समाज, धर्म का उच्चाटन तथा वांशिक, भाषिक अस्मिताओं का परिहार ऐसी मृगमरीचिका के पीछे दौड़ने से काम नहीं होगा। सुव्यवस्थित शासन, संभाव्य समता, सहिष्णुता, एकात्मता (लेकिन एकरूपता नहीं), साधनों का पुनरूपयोग और जीवन का संतुलन, इन सभी के अधीन व्यावहारिक व्यक्तिस्वातंत्र्य जो स्वैर स्वतंत्रता से भिन्न है इन विचारों का हमें आश्रय लेना होगा। संक्षेप में, मैं यह कहूँगा कि हमें अच्छे जीवन की आकांक्षा रखनी होगी। मैं निश्चित रूप से यह कह सकता हूँ कि सीमित साधनों का मुक्त इस्तेमाल, नैसर्गिक

संपत्ति का अनिर्बंध उपयोग और मानव के लिए जो परिसर उपयुक्त है उसका विनाश इससे अच्छे जीवन की आकांशा हम नहीं कर सकते। ''सर्वत्र सुखिनः सन्तु'' इस मंत्रघोष को जारी रखकर यह विनाश कार्य होता है, तो भी उसमें मुट्ठीभर लोगों का ही फायदा होनेवाला है, यह निश्चित।''

समाजवाद की विचारधारा संतुलित विचारधार है। यह विचारधारा व्यक्ति, समाज और उसका परिसर सभी को ज्यादा से ज्यादा न्याय दिलानेवाली है और तीनों में समन्वय और संतुलन कायम करने के बारे में विचार करने वाली है। मूलतः यह विचार व्यक्तिवाद के विरोध में उभरकर सामने आया। व्यक्ति को स्वयंपूर्ण बनाना है, उसका विकास करना है, उसको ज्यादा से ज्यादा स्वतंत्रता देनी है और उसके विरोध में अन्य व्यक्ति या समाज का रोड़ा नहीं होना चाहिये यह व्यक्तिवाद की कल्पना है। यह व्यक्तिवाद आर्थिक प्रेरणा से पनपता रहता है और उसकी सबसे बड़ी प्रेरणा स्वार्थ तथा मुनाफा होती है। यह व्यक्तिवाद समाज के लिए खतरनाक है। यह व्यक्तिवाद मानता है कि व्यक्ति के लिए समाज साधन है। इसके विरोध में पूरे समाज को समेटनेवाली समाजवादी विचारधारा सामने आयी। लेकिन, इसमें भी एक खतरा है, एक विचार का, जो व्यक्ति को मूल्यहीन मानता है और हर व्यक्ति की पूर्णरूपेण निष्ठा समाज, राष्ट्र आदि समुदाय को देता है। यह विचारधारा मानो ऐसा मानती है कि समाज के पूरे चक्र में व्यक्ति एक स्क्रू है। समाज के मंदिर में व्यक्ति एक ईंट है। यह विचार समाजवाद की विकृति है। लोकतांत्रिक समाजवाद व्यक्ति और समाज दोनों पर बल देता है और ऐसी महत्वाकांक्षा रखता है कि समाज पूरी तरह विकसित हो, जिसमें समाज के हर व्यक्ति के विकास के पूर्ण अवसर उपलब्ध हों। ऐसे समाज में न कोई अपेक्षित रहे ना शोषित। ऐसे समाज में शोषित और शोषक, गुलाम और मालिक, प्रजा और राजा, गरीब और श्रीमंत ऐसे दो चरम ना हों। उसमें व्यक्ति और समाज, व्यक्ति और सामाजिक गुट दोनों का अच्छा तालमेल हो जाए ऐसा ही विचार भारतीय दुःस्थिति पर उपाय हो सकता है। जो विचार समाज के केवल एक वर्ग को बल देगा और अन्यों को कुचलने का प्रयास करेगा, वह समाजवाद को कतई मंजूर नहीं है। भारत में राज्यशासन,

अर्थव्यवस्था, शिक्षणप्रणाली और समाजव्यवस्था ऐसी हो कि जहाँ न किसी का शोषण होगा, न किसी को शोषण करने का अवसर मिलेगा। समाजवाद इस चितंन और प्रयास में लगा रहता है कि भारत में रहने वाला बहुजन समाज है, जिसमें सभी जाति–धर्म के श्रमिकों का अंतर्भाव है, उसको न्याय कैसे मिले आदि। संसार में जहाँ समाजवादी प्रेरणा से काम चल रहा है, वहाँ विषमता कम करने की कोशिश होती रहती है और वह समाज सभी को न्याय देने का प्रयास करता रहता है। दलित, पीड़ित, शोषित स्त्री हो, आदिवासी हो, भूमिहीन किसान हो या बेरोजगार युवक हो समाजवाद उनको इंसाफ दे सकता है। समाजवाद में सहकारी भाव तथा सहकारी संस्थाओं का असाधारण महत्व रहता है। यह एक नई संस्कृति स्थापित करने का ही प्रयास है। समाजवाद एकमात्र उपाय है, यह मानकर राष्ट्र सेवादल लोकतांत्रिक समाजवाद के लिए प्राण की बाजी लगाने का प्रण करता है। डॉ. बाबासाहब आंबेडकर एक महान समाजवादी थे इसलिए उन्होंने आग्रह किया कि राज्य समाजवाद की संकल्पना संविधान में ग्रथित हो जाए । म.गांधी कहते थे कि ''मैं समाजवादी हूँ लेकिन मेरा समाजवाद मुझसे शुरू होता है। स्वामी विवेकानंद तथा सरदार भगतसिंह खुद को समाजवाद मुझसे शुरू होता है। स्वामी विवेकानंद तथा सरदार भगतसिंग खुद को समाजवादी मानते थे। राष्ट्र सेवा दल का सैनिक उनके विचारों का अनुसरण करना चाहता है।

3. समाजवादी विचार–कुछ सवाल

कुछ लोगों का कहना है कि समाज में समता का प्रारूप कायम करना शायद विदेशी संकल्पना है और शायद इसका सबसे पहला प्रयोग विदेश में हुआ हो। लेकिन, समता जो समाजवाद की आधारभूत संकल्पना है, यह तो विदेशी नहीं हो सकती। समता की संकल्पना पूर्णरूपेण व्यक्तिवाद के विरोध में है, क्योंकि समता, समाज में ही पनप सकती है। व्यक्तिवादी विचार का कोई भी व्यक्ति समता का विरोध ही करेगा। पूँजीवादी तो ऐसा ही मानते हैं कि समता से प्रगति नहीं हो सकती। उनकी विचारधारा

के अनुसार प्रगति का आधार विषमता ही है। विषमता के सिवा स्पर्धा नहीं हो सकती और स्पर्धा के बगैर प्रगति का रास्ता नहीं खुल सकता लेकिन, भारत में प्राचीनकाल से ही समता की संकल्पना समाज के मन में दृढ़ है। ''सहनौ भुनक्तु'' यह सहभाव समता का आधार है। सभी संतों ने समता को ही पुकारा किया है। संत तुकाराम कहते थे, ''अहंता का खंडन करो, समता का आचरण करो''। अहंता याने व्यक्तिवाद और स्वार्थ। तो यह कहना होगा कि समाजवाद की मूल प्रेरणा या आधारभूत प्रेरणा जिस समता के मूल्य से आती है, वो कोई विदेशी विचार नहीं है। हम तो यह भी कह सकते हैं कि यदि हमारे देश में विदेश से आया हुआ बल्ब चल सकता है, हम विदेशी प्लॅस्टिक का इस्तेमाल कर सकते हैं, हवाई जहाज में बैठकर उड़ सकते हैं, तो यदि कुछ आरेखन विदेशी हो भी जाए तो उसमें क्या आपत्ति है। आज तो भारत की भाषा, वेश–भूषा और अर्थव्यवस्था विदेशी बन रही है, तो समाजवाद को इस बहाने नकारने की कोशिश याने गलत तर्क है। जिनको समाजवाद से नुकसान है वही अपने स्वार्थ के लिए समाजवाद का विरोध कर सकते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि अभी समाजवाद खत्म हो गया। विश्व हिंदू परिषद के लोगों ने कहा कि, 'हमने समाजवाद को गाड़ा, अब धर्मनिरपेक्षता की बारी है।' प्रारंभ में यह उद्‌घोषणा ''एंड ऑफ हिस्टरी' नामक किताब के लेखक अमेरिका के एक तत्त्वज्ञान के प्रोफेसर फ्रान्सिस फुकुयामा ने की। जब 1989 में रूस की हार के बाद वहां साम्यवादी प्रशासन समाप्त हो गया उस समय उन्होंने जोर–शोर से कहा गया कि अब समाजवाद समाप्त हो गया और राजकीय उदारमतवाद की हमेशा के लिए विजय हो गई। उनकी दृष्टि से अमेरिका और रूस में जो शीतयुद्ध चल रहा था, वह एक विरोधविकासवादी द्वंद्व था। रूस की हार के बाद यह द्वंद्व खत्म हो गया। इसी आवाज में यहाँ के हिंदुत्ववादी आवाज मिलाते रहते हैं। असल में संसार में यदि द्वंद्व है तो वह व्यक्तिवाद और समाजवाद में है। वह द्वंद्व स्वार्थ और परार्थ में है, यह द्वंद्व व्यक्तिहित और समाजहित में है। समाजहित कभी परास्त नहीं हो सकता और व्यक्तिहित कभी हमेशा के लिए विजयी नहीं हो सकता। यदि रूस का साम्यवादी शासन समाप्त हो जाता है,

तो रूस के साम्यवाद में कुछ न्यूनता हुई होंगी। वहाँ के शासन के कुछ दोष उसके लिए कारण हो सकते हैं। वहाँ के साम्यवादी लोगों ने परिस्थिति का मुकाबला करते समय समाजवाद की गतिशीलता ध्यान में नहीं रखी होगी। उन्होंने केवल आर्थिक प्रगति का उद्दिष्ट सामने रखा, लेकिन समाज के सांस्कृतिक विकास का उद्दिष्ट वे भूल गये। इसकी वजह से वहाँ का शासन बदल गया। उसका अर्थ यह कतई नहीं हो सकता कि समाजवाद समाप्त हो गया, या व्यक्तिवाद विजयी हो गया, या समता की संकल्पना हमेशा के लिए खत्म हो गई। समाजवाद प्रगतिशील समाज की साँस है। समाजवादी सभी शोषित और दलित समाज की प्यास है। समाजवाद सभी प्रगतिशील व्यक्तियों का ध्यास है।

4. समाजवादी आंदोलन का इतिहास

(यूरोप और भारत)

समता की संकल्पना और उससे निर्मित हुआ समाजवादी विचार पुराना है, लेकिन समाजवादी आंदोलन आधुनिक है। औद्योगिक क्रांति के बाद मजदूर वर्ग नगरों में आने लगा, संघटित होने लगा और अपने कष्ट तथा शोषण के विरोध में आंदोलन करने लगा इस तरह से समाजवादी आंदोलन पूरे संसार में फैल गया। औद्योगिक क्रांति में बड़ी–बड़ी मशीनें उत्पादन का काम करने लगीं और उन मशीनों पर काम करने के लिए बड़े पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्र से लोग नगरों की ओर आने लगे। कारखानों में बड़े पैमाने पर उत्पादित होने वाले माल की कम कीमत होने से ग्रामीण क्षेत्र के गृह उद्योगों को नुकसान होने लगा। इसके साथ–साथ नगरों में काम करने वाले मजदूरों का शोषण करके उनके श्रम से उत्पादित होनेवाला अधिक हिस्सा पूँजीपति स्वाहा करने लगे। उसकी प्रथम प्रतिक्रिया लडाईटस के आंदोलन में हुई। इसके लिए मजदूरों की दयनीय स्थिति और उनका शोषण जैसे तत्व ही जिम्मेवार हैं, ऐसा मानकर लडाईटस ने यंत्रों की तोड़फोड़ शुरू की, लेकिन यह आंदोलन ज्यादा समय तक चल नहीं पाया। रॉबर्ट ओवेन और सायमन आदि कारखानों के मालिकों ने मजदूरों को व्यवस्थापन में

हिस्सेदारी दी और उनके सहभाग से समाजवाद का एक अनोखा प्रयोग शुरू किया। कुछ हद तक यह गांधीजी की न्यासीवृत्ति का ही रूप था। लेकिन, बहुसंख्य पूंजीपतियों ने इस प्रयोग का अनुकरण करने से इन्कार किया और समाजवादी आंदोलन में ओवेन तथा सायमन का समाजवादी प्रयोग स्वप्नदर्शी समाजवाद के नाम से जाना गया।

समाजवादी आंदोलन में कार्ल मार्क्स (5 मई 1818–14 मार्च 1883) का स्थान अनन्य साधारण है। मार्क्स ने समाजवाद को जिस रूप में पेश किया, वह शास्त्रीय समाजवाद के नाम से माना जाता है। कई लोग उसको मार्क्सवाद भी कहते हैं। मार्क्सवाद को इसलिए शास्त्रीय माना जाता है क्योंकि उन्होंने समाज के सामने अपने विचार लगभग वैज्ञानिक ढंग से रखे। उनकी दृष्टि से संसार का पूरा इतिहास द्वंद्वात्मक है। अर्थात हमेशा समाज दो खेमों में बट गया और उनमें सतत् संघर्ष चलता रहा। औद्योगिक क्रांति के पूर्व सरमायेदार और गुलामों में संघर्ष रहा। यह संघर्ष खेतिप्रधान समाज में होता रहा। लेकिन, औद्योगिक क्रांति के बाद असली संघर्ष पूँजीपति और मजदूरों में रहा। इस विचारधारा का वर्णन मार्क्स ने 'द्वंद्वात्मक विरोधविकासवाद' नाम से किया। इसीको शास्त्रीय समाजवाद माना जाता है। मार्क्स की दृष्टि से पूँजीवाद के पेट से पैदा हुए मजदूर जब संघटित हो जायेंगे और पूँजीवाद पर हमला बोलेंगे, उनको खत्म करके राजनैतिक सत्ता हाथ में ले लेंगे, तभी समाजवाद स्थिर रूप से कायम हो सकता है, क्योंकि इतिहास में जो द्वंद्व होता है वही मजदूर वर्ग खत्म करेगा और उनका समाजवादी राज्य हमेशा के लिए कायम रहेगा। उसके लिए कार्ल मार्क्स ने मजदूर क्रांति की उद्घोषणा की, जिससे पूरे संसार के मजदूरों के मन में एक उमंग और लहर पैदा हो गई। मार्क्स को हिंसात्मक मार्ग का परहेज नहीं था। लेकिन, इंग्लैंड तथा हॉलैंड जैसे देशों में जनतंत्र के माध्यम से भी मजदूरों की सत्ता आ सकती है ऐसा उन्होंने माना था। लेकिन, सत्ता मजदूरों के हाथ में आने के बाद पूँजीपति उसके विरोध में सभी कुमार्गों का प्रयास करेंगे, प्रतिक्रिया स्वरूप क्रांति करेंगे, इसलिए मार्क्स ने कामगारों को आवाहन किया कि सत्ता हासिल करने के बाद वे कामगारों की अधिसत्ता (डिक्टेटरशिप ऑफ दि प्लोरिटारिएट) कायम करें। उसमें यह कल्पना निहित है कि

कामगार क्रांति में कामगार अग्रभागी रहेंगे, लेकिन सत्ता आने के बाद सत्ता संभालने का काम पूरी तरह कामगारों का राजकीय दल करेगा और उस समाज व्यवस्था में उनका विरोध करनेवाला राजकीय दल नहीं होगा। यह कामगारों की सत्ता पूरे समाज का परिवर्तन समाजवादी व्यवस्था में करेगी। कार्ल मार्क्स के इन विचारों से प्रभावित होकर ही रूसी राज्यक्रांति, चीन और क्यूबा की राज्यक्रांति संपन्न हुई। इतना ही नहीं एक जमाने में लगभग आधा संसार मार्क्स के वचारों से प्रभावित था। मार्क्स ने 1848 में प्रसिद्ध हुए कम्युनिस्ट घोषणा पत्र में अपने विचार ग्रथित किये। यह कहने में कुछ अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यह संसार को प्रभावित करने वाला सबसे बहुमूल्य ग्रंथ है। पूँजीपति व्यवस्था का विश्लेषण करने वाला 'दास कॅपिटल' (पूँजी) यह ग्रंथ तीन खंडों में प्रकाशित हुआ। मार्क्सवाद के नाम से बहुत अच्छी घटनाएँ हुईं, उसके साथ–साथ उनको माननेवालों ने उसका दुरूप्रयोग भी किया, यह कहना आवश्यक है। इसकी वजह से ही समाजवाद की कई विचारधाराएँ निकलीं और विकसित हुईं।

संसार में कष्ट करनेवालों ने संघटित होकर इतिहास पर अपना प्रभाव डालने की लगातार कोशिश की। समाजवादी आंदोलन का प्रभाव पूँजीपतियों पर भी हो गया और उसका दृश्य रूप पूँजीवाद के अर्थशास्त्र में देखने को मिलता है। समाजवाद यह मानता है कि पूँजीवाद प्रणाली अंतरविहीत दोषों से भरी हुई है और इसकी वजह से संसार पर अनेकानेक आपत्तियाँ आ जाती हैं। पूंजीवाद स्वाभाविक रूप से सम्राज्यवाद में परिणत होता रहता है और साम्राज्यवादियों की टक्कर में युद्ध की संभावना हमेशा रहती है। रूसी राज्यक्रांति के प्रणेता कॉ. लेनिन ने कहा था कि पूँजीवाद के कारण ही प्रथम विश्वयुद्ध का खतरा आ गया। इतना ही नहीं पूँजीवादी अर्थशास्त्र में व्यापार की तेजी और मंदी रहती है और कई अर्थशास्त्री मानते हैं कि 1929 में आई जागतिक मंदी, पूँजीवाद का ही परिणाम है। लेकिन केन्स नाम के ब्रिटिश अर्थशास्त्री ने किताब लिखकर पूँजीवादी अर्थशास्त्र पर बहुत कुछ प्रभाव डाला। उसको कई लोग 'केन्स की क्रांति' मानते हैं। पूँजीवाद में मजदूरों को रोजगार देना, पूँजीवादी सरकार की जिम्मेदारी नहीं मानी जाती। लेकिन केन्स ने कहा, 'यदि पूँजीवादी सरकार यह

जिम्मेदारी कबूल करे और रोजगार के जरिए मजदूरों की जेब में क्रयशक्ति देने का प्रयास करे, तो, वैश्विक मंदी खत्म हो सकती है।' इंग्लैंड में वहाँ की सरकार ने यह प्रयोग किया और वैश्विक मंदी का दुष्परिणाम कुछ हद तक टला। लेकिन यह कबूल करना पड़ेगा कि दूसरे महायुद्ध के कारण जागतिक मंदी का पूरा धोखा टल गया। मात्र केन्सीयन क्रांति की वजह से संसार के पूँजीवाद ने कल्याणकारी राज की कल्पना स्वीकृत कर ली और यह मान लिया गया कि कल्याणकारी योजनाओं से मजदूरों की शक्ति को सुरक्षित रखने के साथ बढ़ाया भी जरूरी है। इसके बाद पूंजीवादी सरकारें कुछ हद तक कल्याणकारी सरकारें बन गईं। लेकिन, पूँजीवादी सरकारें या पूँजीवाद के समर्थक हमेशा समाजवाद को धोखा ही मानते रहे। उनके विचार से सामाजिक प्रगति के लिए समता के बजाय विषमता का आधार और सहकार के बदले स्वार्थ प्रेरणा ही चेतना बन सकती है। केन्सीयन क्रांति के बाद भी संसार में पूँजीवाद बनाम समाजवाद का संघर्ष कम नहीं हुआ। बल्कि आज के वैश्विीकरण के दौर में यह संघर्ष एक दृष्टि से कांटे की टक्कर बन गया।

कल्याणकारी राज की कल्पना का प्रभाव साम्यवाद से हटकर लोकतांत्रिक समाजवाद के विचार का आश्रय करनेवाले सभी यूरोपीय समाजवादियों पर गहरा पड़ गया। इंग्लैंड या यूरोप में जो भी समाजवादी सरकारें आईं, उन्होंने अपना लक्ष्य कल्याणकारी राज्य ही रखा। यूरोप के समाजवादियों ने मार्क्स और लेनिन को माननेवाले साम्यवादियों से अलग होकर अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी परिषद (Socialist International) कायम की। आगे चलकर संसार के लगभग सौ देशों से कई समाजवादी राजनैतिक दल उसके सदस्य बने। जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में काम करने वाला समाजवादी दल भी उसका सदस्य बना। लेकिन, बाद में यह महसूस होने लगा कि जैसे मार्क्सवाद यह विचारसरणी युरोप को मद्देनजर रखकर विकसित हुई, वैसे ही लोकतांत्रिक समाजवादी विचारधारा भी यूरोपीय समाजव्यवस्था पर आधारित है। लेकिन एशिया, आफ्रीका, लैटिन अमेरिका में जहां किसान वर्ग ज्यादा तादाद में है, वहाँ कामगारों को कामगार क्रांति का अग्रदूत मानकर क्रांति का प्रयास करना कैसे हो सकता है? साम्यवादियों ने जितना

कामगारों को संघटित करने का प्रयास किया, उतना किसानों को संघटित करने का नहीं किया। इसकी वजह से जिन समाजों में खेती एक प्रधान व्यवसाय है और पूरी समाजव्यवस्था खेती के आधार पर चल रही, उनका विचार साम्यवादी विचारधारा ने ठीक तरीके से नहीं किया। इसकी वजह से जयप्रकाश और डॉ. लोहिया ने ब्रह्मादेश के पंतप्रधान थाकीन नू की सहायता से **एशियाई समाजवादी परिषद** कायम की थी। प्रगत देशों से विकासशील देशों की समस्याएँ हमेशा अलग रहती हैं। लेकिन, प्रगत देशों के नेता हमेशा पूरे संसार का विचार अपने ही विचारों के ढाँचे में ढालना चाहते हैं। विश्व बैंक, मुद्रानिधि तथा विश्व व्यापार संघटन, अपना सर्वसाधारण आर्थिक ढाँचा विकासशील देशों पर थोपने का प्रयास करते हैं। वैसे ही प्रगत देशों के समाजवादी या साम्यवादी विचार अप्रगत देशों पर रूबरू थोपने का प्रयास भी गलत माना जाना चाहिए। असल में हर देश की समस्याएँ अलग होती हैं और पूरी स्थितियों के मुताबिक साम्यवाद या समाजवाद को ढालने का प्रयास स्थानिक दृष्टि से होना बहुत जरूरी है।

5. भारतीय समाजवादी आंदोलन का इतिहास

भारत में समाजवादी आंदोलन के दो प्रवाह रहे। एक प्रवाह आंबेडकरी आंदोलन का है और दूसरा प्रवाह जयप्रकाश के नेतृत्व में निर्माण हुआ समाजवादी प्रवाह है। लगभग सभी लोग मानते हैं कि दूसरा प्रवाह ही समाजवादी प्रवाह है। लेकिन मेरी दृष्टि से आंबेडकरी आंदोलन का प्रवाह एक माने में असली देशी प्रवाह है। वह हमेशा समता की संकल्पना पर बल देते आये, इतना ही नहीं उन्होंने कुछ हद तक समाजवादी कार्यक्रम में भी भाग लिया इसलिए, यह मानना जरूरी है कि ये दोनों प्रवाह लोकतांत्रिक समाजवाद के ही प्रवाह हैं।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने दलित अत्याचार के सवाल के मद्देनजर अपने विचारव्यूह की रचना की। मार्क्स की दृष्टि से समाज की अंतिम कड़ी ही समाजवादी क्रांति की अग्रहारा बन सकती है। सर्वहारा ही क्रांति के अग्रदूत बन सकते हैं। मार्क्स के इस

विचार से ही उन्होंने यूरोप के समाज में सबसे दबा–कुचला समझे जाने वाला अर्थात मजदूर वर्ग को आधार रखा। कार्ल मार्क्स का मानना था कि मजदूर के पास खोने के लिए उनकी जंजीरों के अलावा कुछ भी नहीं है। यह कबूल करना ही पड़ेगा कि हमारे देश में यह वर्ग दलित आदिवासियों का है। इसलिए भारत की समाजवादी क्रांति दलित और आदिवासियों की सहायता से ही हो सकती है। इस दृष्टि से डॉ. आंबेडकर की विचारधारा बहुत ही अहम महत्व की है। उन्होने अपने कार्यक्रम में जातिप्रथा को समाप्त करने का सर्वाधिक महत्व दिया। कार्ल मार्क्स हो या यूरोप के समाजवादी हों, उनको जातिप्रथा का अनुभव होना संभव ही नहीं था। इसलिए, उनके पूरे विश्लेषण से जातिप्रथा का उद्‌भव या विकास इसका विवरण नहीं हो सकता। इसलिए डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने जाति को वर्ग से ज्यादा महत्व दिया और भारत के लिए यह महत्त्व की चीज है। समाजवाद के बड़े विश्लेषक श्री मधु लिमये जी ने कहा कि पूरे संसार में कम्युनिस्ट मॅन्युफेस्टो का जो महत्त्व है, उससे ज्यादा महत्त्व डॉ. आंबेडकरजी के 'जाति विध्वंसन' नामक (Annihilation of caste) पुस्तक का भारत के लिए है। समाजवादी चिंतक डॉ. राममनोहर लोहिया ने समाजवादी आंदोलन में जातिनीति समाविष्ट करने के बाद डॉ. आंबेडकर और डॉ. लोहिया एक दूसरे के प्रति आकृष्ट हो गये थे और यह संभावना बन गयी थी कि भारत में डॉ. आंबेडकर और डॉ. लोहिया के नेतृत्व में समाजवादी आंदोलन आगे बढ़ेगा। स्वतंत्र मजदूर पार्टी का डॉ. आंबेडकरजी द्वारा तैयार किया हुआ मॅन्युफेस्टो लेंगे, तो उनका समाजवादी विचार बहुत हद तक स्पष्ट हो जाता है। उनका राज्य, समाजवाद का विश्लेषण अहम महत्व रखता है। संविधान में ही राज्य समाजवाद की धारा समाविष्ट की जाय यह विचार बहुत महत्व का था। आज के माहौल में उसका ज्यादा महत्व ध्यान में आता है। साम्यवादी विचारों में हिंसा और कामगार तानाशाही का जो विचार है, वह डॉ. बाबासाहब आंबेडकरजी को कतई मंजूर नहीं। वे संसदीय प्रणाली पर प्रगाढ़ निष्ठा रखनेवाले थे और उनका मानना था कि सत्ताबदल बिना खून–खराबे के होनी चाहिए। डॉ.

बाबासाहब आंबेडकरजी का समाजवादी विचार भारतीय समाजवाद के लिए एक आनोखी देन है।

1934 में जयप्रकाशजी के नेतृत्व में निर्मित हुए समाजवादी आंदोलन का इतिहास बहुत ही रोचक और प्रबोधनकारी है। युवा समाजवादियों ने जो सोशलिस्ट पार्टी कायम की, उसके सभी नेता प्रारंभ में कट्टर मार्क्सवादी थे। हिंसा, कामगार अधिसत्ता, वर्गसंघर्ष, वर्ग विश्लेषण आदि विषयों के बारे में उनके मन पर कार्ल मार्क्स का प्रभाव बहुत गहरा था। लेकिन वे मार्क्सवादी या साम्यवादी प्रभावों का गहरा असर रखनेवाले तीसरे अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट परिषद के साथ जुड़ना नहीं चाहते थे। क्योंकि उसपर स्टालिन का पूरा प्रभाव था। स्टालिन ने जिस तरह अपने सहकारियों की हत्या की और रूसी साम्यवादी शासन की सत्ता अपनी मुटठी में केंद्रित की थी, वह उनको कबूल नहीं था। वे भारत में उससे हटकर और उनके प्रभाव से मुक्त होकर समाजवादी आंदोलन का काम करना चाहते थे। इतना ही नहीं म.गांधीजी के नेतृत्व में भारत में स्वतंत्रता आंदोलन का जो काम कॉंग्रेस के जरिए चल रहा था, उसके साथ काम करने का उनका आग्रह था। आचार्य नरेंद्र देव ने 'राष्ट्रवाद और समाजवाद' नामक किताब लिखकर राष्ट्रीय स्वतंत्रता की लड़ाई और समाजवाद की लड़ाई इन दोनों का संयोग कैसे किया जा सकता है, उनका विवरण किया है। महात्मा गांधी के कई विचारों से इन समाजवादियों का टकराव था, फिर भी उन्होंने राष्ट्रवाद के लिए उनके नेतृत्व में काम करने का निश्चय किया और कॉंग्रेस के अंदर 'कॉंग्रेस सोशलिस्ट पार्टी' कायम की। उस पार्टी ने उत्तर प्रदेश में और बिहार में किसानों के और मुंबई में कामगारों के कई आंदोलन संघटित किये और उनके आधार पर समाजवादी विचारों के फैलाव का काम शुरू किया। 1942 के 'भारत छोड़ो' आंदोलन में विध्वंसकारी जान–मान की हानि को टालनेवाला तथा सरकारी यंत्रणा नाकाम करने के लिए विध्वंसनकारी कार्यक्रम संघटित करने के लिए सभी समाजवादी नेता भूमिगत हो गये और उन्होंने जान हथेली पर लेकर उस आंदोलन का नेतृत्व किया। जयप्रकाश और लोहिया जी ने आजाद दस्ता कायम किया। एस.एम.जोशी इमाम अली बनकर पूरे देशभर संचार करते रहे और

साने गुरूजी अपनी ज्वालाग्राही कलम से भूमिगत बुलेटिन में लेख लिखते रहे। अच्युतराव पटवर्धन तो इस क्रांति संगठन के सर्वोच्च नेता माने गये थे। उनके साथ श्रीमती अरूणा असफअली भी थी। सातारा, बलिया और मुजफ्फरपुर में जो आजाद सरकारें बनीं उनका इतिहास रोमहर्षक और तेजस्वी है। जयप्रकाशजी मलाया जाकर नेताजी सुभाषचंद्र बोस से मिलना और आजाद सिंह सेना तथा 'भारत छोड़ो' आंदोलन में संबंध प्रस्थापित करना चाहते थे। जिस तरह राष्ट्र सेवा दल के असंख्य सैनिकों ने इन भूमिगत नेताओं का साथ दिया, वह एक सवर्णिम इतिहास है। इस आंदोलन के दौरान समाजवादी लोगों की साम्यवाद से दूर हटने की प्रक्रिया तेज हो गई। इसका कारण ऐसा था कि जब सितंबर 1939 में हिटलर और स्टालिन में पॅक्ट हो गया, जब संसार के सभी साम्यवादी ब्रिटिशों के खिलाफ बन गये। भारत के साम्यवादियों ने भी साम्राज्यवादियों के खिलाफ कड़ा रूख अपनाया। लेकिन 22 जून 1941 से जब जर्मन और रूस के बीच युद्ध शुरू हो गया, तब कम्युनिस्टों ने इस युद्ध का नाम 'लोकयुद्ध' रखा और भारत के कम्युनिस्टों ने अंग्रेजी सत्ता का साथ देना शुरू किया। इतना ही नहीं उन्होंने 'भारत छोड़ो' आंदोलन के विरोध में सख्त रूख अपनाया। इसका समाजवादियों पर गहरा प्रभाव पड़ा और वे साम्यवाद से काफी दूर हट गये। इसके साथ–साथ उनके मन में गांधीजी के विचारों का, खास करके विकेंद्रित राज्य व्यवस्था, विकेंद्रित अर्थव्यवस्था तथा शांतिपूर्ण रूप से बदलाव का बहुत असर हुआ। 1948 में उनके लिए कॉंग्रेस के अंतर्गत कॉंग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के नाम से काम करना असंभव हो गया और उन्होंने कॉंग्रेस से हटकर नाशिक अधिवेशन में सोशलिस्ट पार्टी कायम की। 1948 से 1977 तक प्रसोपा तथा संसोपा नाम से उनका काम कभी एक जगह तथा कभी दूसरी जगह चलता रहा और उन्होंने समाजवादी विचारधारा को गहरा और चौड़ा बनाने का प्रयास किया।

इस समाजवादी आंदोलन में आचार्य नरेंद्र देव, लोकनायक जयप्रकाश और डॉ. राम मनोहर लोहिया इन तीनों के विचारों से समाजवादी आंदोलन नया रूप लेते रहा। आचार्य नरेंद्र देव अंत तक मार्क्सवादी रहे लेकिन उनका भारत के अन्य मार्क्सवादी

आंदोलन से कभी रिश्ता नहीं बना। आचार्य जी द्वारा राष्ट्रवाद और 'समाजवाद की लड़ाई साथ–साथ चलना संभव और जरूरी है', आदि का प्रतिपादन किया जो कि बहुत महत्वपूर्ण रहा। उन्होंने समाजवादी आंदोलन में वर्गसंगठन के महत्व को भी सभी के सामने बहुत अच्छी तरह से रखा। साम्यवादी हमेशा बेस और सुपर स्ट्रक्चर अर्थात नींव और इमारत की चर्चा करते रहते हैं। उनकी दृष्टि से नींव आर्थिक ढाँचे की होती है और वह सबसे महत्व की रहती है। इमारत में धर्म, जाति, संस्कृति, स्त्री–पुरूष भेद आदि प्रश्न होते हैं, लेकिन उसका महत्व दोयम रहता है। आचार्य जी मार्क्सवादी होने की वजह से आर्थिक नींव को महत्व तो देते थे, लेकिन उसके साथ नींव के ऊपर के ढाँचे को भी देते थे। वे मानते थे, मॅटर से माईंड पैदा होता है जरूर, लेकिन पैदा होने के बाद माईंड भी ऐसी ताकत हासिल करता है, जिससे मॅटर को भी बदलना पड़ता है। यह चर्चा भारत के लोकतांत्रिक समाजवादी विचार के विकास के लिए बहुत ही महत्व की रही। लोकनायक जयप्रकाश जी की वजह से समाजवादी विचारों में साध्य–साधन विवेक की चर्चा आयी। केवल साध्य शुद्ध हों और वह प्राप्त करने वाला साधन अशुद्ध भी क्यों न हो, यह विचार जे.पी. की वजह से समाजवाद से हमेशा के लिए हट गया। आज भी भारत में लोग समाजवाद का विचार करते ही उनको साध्य–साधन विवेक की चर्चा या साधन शुचिता की चर्चा ध्यान में आ जाती है। चाहे वह इस मुद्दे का मजाक उड़ायें, लेकिन आचार शुद्धता का आग्रह रखने वाले समाजवादियों के प्रति उनके मन में सम्मान की भावना रहती है। इसके साथ ही जयप्रकाशजी ने पंचायत राज और लोकस्वतंत्रता की बड़ी ताकत के साथ आवाज उठाई थी। डॉ. राम मनोहर लोहिया जी ने तो भारतीय समाजवाद को मानो एक नया रूप दे दिया। उन्होंने समाजवाद को पूरी तरह भारतीय संस्करण प्राप्त कर लिया। उनका एक सुप्रसिद्ध वचन है कि, ''भारत जिन दो कटघरों में खड़ा है, उनके नाम जातिप्रथा तथा स्त्री–पुरूष भेद है'' 'पिछड़े पावे सौ में साठ' यह नारा देकर उन्होंने मंच में खड़े होकर जातिनीति की चर्चा खड़ी कर दी और भारत की सियासत बदल गयी। भारत की जनतंत्र की नीवं विस्तारित करने में लोहियाजी का योगदान अहम महत्व का है। गरीबी की व्याख्या की चर्चा लोहियाजी के लोकसभा में भाषण से शुरू हो गई। वह

बहस आज भी जारी है। भारत के लिए बड़े यंत्रों का तंत्रविज्ञान कैसे संदर्भहीन है और भारत जैसे अविकसित और बड़ी आबादीवाले देश के लिए छोटी मशीन का तंत्रविज्ञान विकसित करना कैसे महत्व का है, यह बात उन्होंने आग्रहपूर्वक समाज के सामने रखी। लोकभाषा का उनका आग्रह बहुत ही महत्व का रहा, लेकिन अब सभी जानते हैं कि गंगा उल्टी बह रही है। अंग्रेजी का रोब कम होने के बजाय बढ़ ही रहा है। लेकिन, उन्होंने समाज के सामने लोकभाषा और लोकव्यवहार का अन्योन्य संबंध रखा था। साधन शुचिता की चर्चा उन्होंने अपने ''तात्कालिकता का सिद्धांत'' में प्रस्तुत की। उन्होंने यह सोच रखी कि जो उद्दिष्ट है, उसका प्रतिबिंब तत्काल हर कदम में प्रतीत होना चाहिए। विचार, उच्चार, और आचार ये तीनों सुसंवादी रहना कैसे जरूरी है, यह उन्होंने बार–बार कहा। डॉ. लोहिया की सप्तक्रांति की कल्पना बहुत आयामी और महत्व की है। डॉ. लोहिया के योगदान से भारतीय समाजवाद का एक नया नजारा लोगों के सामने आ गया। कई लोगों ने उसको ''समाजवाद का नया दर्शन'' नाम से संबोधित किया था। वह आज भी विशेषकर वैश्वीकरण के युग में बहुत ही आवश्यक संदर्भ रखता है।

भारतीय लोकतांत्रिक समाजवाद की विचारधारा डॉ. बाबासाहब आंबेडकर, आचार्य नरेंद्र देव, जयप्रकाश नारायण और डॉ. राम मनोहर लोहिया आदि नेताओं से परिपुष्ट हो गई है। लेकिन, उसका संगठन, एक विचारधारा का परिवहन करने के लिए जितना शक्तिशाली रहना चाहिए, उतना कभी नहीं रहा। डॉ. आंबेडकर और डॉ. लोहया के एक जगह आने की संभावना 1956 में पनपी थी, लेकिन डॉ. आंबेडकर के अकल्पित महापरिनिर्वाण से खंडित रह गई। समाजवाद नया मोड़ लेते–लेते ज्यों का त्यों रह गया। समाजवादी नेताओं को जितना ध्यान संगठन की तरफ देना चाहिये था, उतना कभी नहीं दिया। विभिन्न विचार होते हुए भी सभी को एक साथ रखने का और उनके जरिए समान ध्येय प्राप्ति के लिए भरपूर प्रयास करने का संगठन का एक ढाँचा गांधीजी ने कायम किया था। गांधीजी एक महान संगठक भी थे। नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने ब्रिटिशों के लष्कर से आये हुए सैनिकों को आजाद हिंद सेना में भरती करके

उनमें जो नए प्राण फूँक दिये थे और "आप मुझे खून दो, मैं आपको आजादी दूँगा'" यह नारा देकर पूर्व एशिया के सभी भारतीयों के मन में देशप्रेम की भावना भरी थी जो कि एक मिसाल है। लेकिन, समाजवादी आंदोलन में शायद जयप्रकाश को छोड़कर कोई बड़ा संघटक पैदा नहीं हुआ। इतना ही नहीं समाजवादी आंदोलन में व्यक्तिवाद बढ़ता गया। व्यक्तिवाद ने ही समाजवादी आंदोलन को रोक दिया। असल में व्यक्तिवाद के विरोध में समाजवादी आंदोलन को रोक दिया। असल में व्यक्तिवाद के विरोध में समाजवाद का विचार सामने आया, लेकिन वही व्यक्तिवाद अंत में घातक साबित हुआ। समाजवादी आंदोलन को भारत में किसानों का एक बड़ा भारी संगठन और ताकत खड़ी करना जरूरी था। कुछ प्रयास हुआ जरूर लेकिन समाजवादी आंदोलन ज्यादातर नागरी आंदोलन रहा। उसका रूप ज्यादातर मध्यवर्ग का देखने में आया। समाज की कतार में जो अंतिम खड़े हैं, वे दलित, आदिवासी और महिलाओं को संघटित करने का शक्तिशाली प्रयास नहीं हो पाया। दलितों में कर्पूरी ठाकुरजी ने काम किया। आदिवासियों में मामा बालेश्वर दयाल ने काम किया और महिलाओं में श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय ने काम किया। ऐसा कुछ उदाहरण है जरूर है लेकिन इन कामों का जितना फैलाव जरूरी था, वह नहीं बन पाया। कामगार, समाजवाद के अग्रदूत हैं यही भावना कमोबेश समाजवादियों में रही। लेकिन यह कहना जरूरी है कि ऐसी कई खामियाँ नजर आने के बावजूद समाजवादी आंदोलन का असर भारतीय समाज पर जरूर हुआ है।

6. भारतीय समाजवाद के सामने चुनौतियाँ!

मेरी दृष्टि से भारत में समाजवाद के सामने आज आठ चुनौतियाँ हैं, जिसके परिप्रेक्ष में समाजवाद का नया रूप ढालना जरूरी है। समाजवादी महापुरूषों ने जब समाजवाद का काम शुरू किया, तब इसमें से कुछ चुनौतियाँ कुछ रूपों में वहाँ मौजूद थीं। लेकिन, अभी उनका पूरा रूप निखरकर सामने आ गया है। एक माने में पूरा संदर्भ ही बदल गया। नये संदर्भ ध्यान में लेकर समाजवाद की नयी रचना पेश करना जरूरी हो गया है। मेरी दृष्टि से वे आठ चुनौतियाँ हैं, 1) वैश्वीकरण 2)जमातवाद,

मूलतत्ववाद तथा दहशतवाद 3) चातुर्वर्ण्य व्यवस्था 4)स्त्री मुक्ति आंदोलन 5) परिसरवाद, 6) तंत्रविज्ञान 7) राज्यहिंसा तथा शस्त्रास्त्र स्पर्धा 8) उपसंस्कृतिवाद, इन आठों चुनौतियों का सामना समाजवाद कर पाये, ऐसा गतिशील समाजवाद बनाना, युवा समाजवादियों का काम है। मुझे पूरा विश्वास है कि यह काम संभालने में यह सक्षम रहेंगे। अभी हमारे सामने पूँजीवाद का नया रूप खड़ा है। शायद हम उसको वित्तीय पूँजीवाद कह सकते हैं। आज संसार में जिस चलन का फैलाव हो रहा है, उसका असली संपत्ति से कोई संबंध नहीं है। उनपर अमेरिका के सकल राष्ट्रीय उत्पाद से नौ गुना ज्यादा कर्जे का बोझ है। ऐसा पॉल स्विझी नाम के सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री ने लिखा है। अमेरिका महासत्ता है और उनका डॉलर प्रमाणित चलन है इसलिये शायद वह बोझ अमेरिका संभाल पायेगा, लेकिन गरीब देश ऐसे छोटे बोझ से ही दब जायेंगे। भारत की सकल राष्ट्रीय संपत्ति जितनी है, शायद उतना ही काला पैसा देश में दौड़ रहा है और उतना ही पैसा परदेश की बैंकों में जमा है। हवाला घपला, एक सांसद श्री गुरूदास दासगुप्ताजी के अनुसार 13 लाख करोड़ रूपया का है। रिजर्व बैंक से वितरित हुए चलन से कई मात्रा में यह पैसा ज्यादा है। अत्याधुनिक संचार सांधनों से किस तरह पैसे की बढ़त होती रहती है, इसका अनुभव रिलायन्स कंपनी ने जो बैंक की रसीदें दी हैं उससे मालूम होता है। संसार में आर्थिक साम्राज्यवाद की एक नयी प्रणाली कायम हो रही है। अमेरिका अपने पूरे शक्ति प्रयोग से विश्व बैंक, मुद्रानिधि और विश्व व्यापार संघटन के जरिए पूरे संसार में लागू करने का प्रयास कर रहा है। उनके त्रिसूत्र हैं, उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण। उससे कई अविकसित देशों का हाल कैसा हुआ, यह उदाहरण अर्जटिंना, ग्रेनाडा, व्हेनेनझुएला, मेक्सिको और पूर्व एशियाई देशों ने हमें दिखाया। इस प्रयोग से हमारी बेरोजगारी, निरक्षरता और गरीबी बढ़ रही है। शिक्षा और आरोग्य दुर्लभ हो रहा है और सार्वजनिक वितरण व्यवस्था लगभग समाप्त है। संसार के सौ पिछड़े देश इस आर्थिक आक्रमण के शिकार हैं। यदि हमें इस आक्रमण का प्रतिरोध करना है, तो दलित पँथर से नक्सलवादियों तक सभी प्रगतिशील शक्तियों को एक जगह आकर प्रतिरोध करने के सिवाय कोई चारा नहीं है। दुनिया विकल्पहीन नहीं है और हमें देखना इस आर्थिक

प्रणाली का समाजवादी विकल्प देखना है। जमातवाद, मूलतत्ववाद और दहशतवाद यह एक ही बीमारी के तीन पहलू हैं। वे तीनों एक–दूसरे को बढ़ावा देते रहते हैं। आज का जमातवादी कल का मूलतत्ववादी अर्थात तालिबान है और परसों का आतंकवादी है। किसी देश में उनका रंग हरा हो सकता है और किसी देश में उनका रंग भगवा हो सकता है। भारत में 'भगवा जमातवादी' और 'हरा जमातवादी' एक दूसरे को परिपुष्ट करता रहता है। गुजरात और काश्मीर की घाटी में हमने दोनों का भयानक रूप देखा है। इसके पहले यह रूप पंजाब में भी देखा था। धार्मिक उन्माद पैदा करके संत–महंत, मुल्ला–मौलवी आदि को बढ़ावा देते–देते युवकों को 'आत्मघात की पथक' निर्माण करने का आदेश यह प्रणाली देती रहती है और समाज में एक दूसरे का नर संहार कैसा होता रहे, इसकी खोज में रहते हैं। यह हिटलरी उन्माद आखिर में निश्चित रूप से भारत के लिए घातक साबित होनेवाला है। आर्थिक साम्राज्यवाद तथा जमातवाद, इसमें कौन सा ज्यादा खतरनाक है यह कहना दुष्कर है। हमें दोनों का सामना एक साथ करने की तैयारी रखना अत्यंत आवश्यक है।

डॉ. लोहियाजी ने कहा था कि, स्त्री–पुरूष भेद तथा जाति कुप्रथा ये भारत के दो भयंकर कटघरे हैं। उनका विनाश हम कैसे करें, इसकी सोच समाजवाद को करनी होगी। आजादी की लड़ाई के समय यह सवाल कुछ हद तक हमने पीछे रखा था। लेकिन, अब उसको पीछे रखना बहुत ही गलत होगा। जब तक जाति कुप्रथा समाप्त नहीं होती, तब तक यह देश कभी भी बलवान नहीं बन सकता। डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने उसके कई उपाय अपने 'जातिविध्वंसन' नाम के किताब में बताये हैं। उसमें सहभोजन, अंतर्जातीय विवाह तथा सामाजिक न्याय के लिए शिक्षा, नौकरी, विधिमंडल में रक्षित पद देना और धर्मांतर शामिल है। मंडल आयोग ने अतिरिक्त जमीन का बंटवारे को भी इसमें शामिल किया। डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने बताया कि सबसे असरदार उपाय अंतर्जातीय विवाह है। डॉ. लोहिया कहते हैं कि राज्य शासन को हर समय अंतर्जातीय विवाह को बढ़ावा देने का प्रयास करना चाहिए। उन्होंने तो यहाँ तक कहा कि अंतर्जातीय विवाह करनेवाले को सेवा में कई सुविधाएँ देना जरूरी है।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने अपने उपायों में धर्मपरिवर्तन का उपाय भी सामने रखा था। अभी–अभी सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री एम.एन. श्रीनिवासन का एक लेख मरणोपरान्त प्रसिद्ध हुआ है। उनका कहना है कि जति कुप्रथा नये उत्पादन संबंध की वजह से समाप्त हो रही है। मुझे यह मानने में परेशानी होती है कि हमारे देश में कितनी बार उत्पादन संबंध बदले, लेकिन जाति कुप्रथा नहीं बदली। अभी एक ही आशा बची है क्योंकि पिछड़े जातियों के करोड़ों बच्चे पढ़कर जागृत हो गये हैं। वही जातिप्रथा विध्वंसन का काम हाथ में ले लेंगे। यदि समाजवादी क्रांति का आधार पिछड़े लोग माने जायेंगे तो जाति कुप्रथा जरूर समाप्त हो जायेगी। स्त्री मुक्ति की चुनौती दिन–ब–दिन गहरी होती जा रही है। एक तरफ कल्पना चावला, किरण बेदी, इंदिरा गांधी, वंदना शिवा, मेधा पाटकर, अरूंधती रॉय आदि नाम सामने आते हैं और दूसरी तरफ स्त्री अत्याचार बढ़ता नजर आ रहा है। संसार में स्त्री मुक्ति का आंदोलन जिस तरह फैल रहा है उससे पुरूषसत्तात्मक पद्धति का जिक्र समाने आ गया है। समाज में जैसे वर्ग और जाति कुप्रथा ऐसी बुनियादी चीजें हैं, उसमें पुरूषसत्तात्मक पद्धति को शामिल करना जरूरी हो गया है। यह संसार वर्गहीन, जातिहीन और पुरूषासत्ता विहीन बनाना जरूरी है। यह काम पूरा करने के लिए जब युवा पीढ़ी वर्ग, जाति और स्त्री–पुरूष आदि इन तीनों दिक्कतों को पार करके इन्सानियत और असली भारतीयत्व नाम से खड़ी हो जायेगी, तभी यह काम पूरा हो जायेगा। आज भारत में हर दो मिनट में एक बलात्कार होता है। हजारों दहेज हत्याएँ होती है और मेरे अनुमान से हमारे यहां एक करोड़ परित्यक्ताएँ हैं। करोड़ों महिलाएँ जुबानी तलाक और परदा पद्धति से पीड़ित है। ऐसी स्थिति में स्त्री–पुरूष भेद खत्म करना और महिलाओं को समान अधिकार देना बहुत ही आवश्यक है। भारतीय संसद में उनको अभी तक आरक्षण नहीं दिया गया, वह बहुत गलत है। जर्मनी की एक स्त्रीमुक्तिवादी नेता श्रीमती पेट्रा केली कहती थी कि, ''महिलाओं को आधी पृथ्वी और आधा आकाश उनके शर्तों पर मिलना चाहिए।'' यह होना ही समाजवाद का रूप है। एक समाजवादी नेता श्री विनायकराव कुलकर्णी हमेशा कहते थे, कि समाजवाद की अंतिम और सूक्ष्म परीक्षा स्त्री–पुरूष समानता में है। राष्ट्र सेवा दल के सैनिकों को इसके लिए काम करना होगा। समाजवादियों के सामने और

एक चुनौती बहुत बड़ा आकार लेकर परिसंवाद के रूप में सामने आ गई है। मानव और परिसर का रिश्ता क्या होना चाहिए इसके बारे में समाजवाद का चिंतन आवश्यक है। जागतिक पूँजीवाद ने जल, जंगल, जमीन, खनिज संपत्ति का भयानक दोहन जारी रखा है और हवा में प्रदूषण भयानक मात्रा में बढ़ गया है। भारत तथा ब्रह्मदेश के जंगल खत्म हो गये हैं और पूँजीवाद की दृष्टि अभी अफ्रीका के ट्रॉपिकल जंगल पर है। कुवेत और इराक के तेल के लिए ही अमेरिका युद्ध पर तुली हुई है। आज हमारे 2 लाख गाँव शुद्ध पेयजल के लिए मोहताज हैं। कई लोग कहते हैं कि अगला युद्ध तेल के लिए नहीं, पानी के लिए होगा। भारत में धनवान कंपनियों को भारत की नदियाँ बेचने का काम शुरू हो गया है। अब तक मध्य प्रदेश में एक और केरल में दो नदियाँ कंपनियों को दी गयी हैं। गांधीजी कहते थे कि "यह पृथ्वी हर एक की जरूरत पूरी कर सकती है, लेकिन किसी एक का लोभ पूरा नहीं कर सकती"। (The Earth has enough for everybody's need but not anybody's greed) हमें परिसर में जल, ऊर्जा आदि के विविध स्रोतों की रक्षा करनी है। पेट्रो केली ने कहा है, कि, यह पृथ्वी हमारे बच्चों ने हमें दी है। उसपर अनेवाली पीढ़ियों का अधिकार है। समाजवाद को परिसर वाद के बारे में ठीक तरीके से चिंतन करना होगा और पूँजीवाद का जो मूलमत्र उपयोग वाद, मौज–मजा हैं, उसका सामना करना होगा। विकास की परिकल्पना चिरंजीवी विकास की ही होनी चाहिये। यह सृष्टि केवल हमारे उपभोग के लिए है, यह विचार शैतानी विचार है। उससे हमें लड़ना होगा और सादगी भरा जीवन अपनाना होगा। इसके साथ–साथ जो हर दिन नया तंत्रविज्ञान आ रहा है और आते ही लोगों को रोजगार से बाहर फेंक रहा है उसके बारे में भी हमें सोचना होगा। तंत्रविज्ञान यह मूल्याधिष्ठित होता है। हर एक अर्थव्यवस्था अपने मूल्यों के आधार पर अपना तंत्रविज्ञान विकसित करती रहती है। जो राष्ट्र शक्तिपूजन करना चाहते हैं यह परमाणु बम का ही निर्माण करेंगे। जो समता का पूजन करना चाहते हैं वे उस दौड़ में शामिल नहीं होंगे। आज एक नया मंत्र निर्माण हो गया है। वह मंत्र है, उत्पादन, मानव नहीं करता यंत्र करता है। श्री बगाराम तुलपुले जी पूछते हैं कि तंत्रविज्ञान गरीबी के

विरोध में है या तंत्रविज्ञान गरीबी पैदा करनेवाला है, यह टेस्ट हर तंत्रविज्ञान को लगाना जरूरी है। इसलिए तंत्रविज्ञान का विचार समाज की आवश्यकता के अनुसार होना आवश्यक है। इसके लिए ही डॉ. लोहियाजी ने आर्थिक विकेंद्रीकरण की बात उठायी थी। उन्होंने कहा कि समय और अवकाश दोनों में भी विकेंद्रीकरण होना जरूरी है। **हमारे गाँव में हमारा राज यह समाजवादी नारा है।**

और दो चुनौतियाँ समाजवाद के सामने हैं, एक है, उपसंस्कृतिवाद की और दूसरी राज्यहिंसा की। उपसंस्कृतिवाद अर्थात जातीयता की चर्चा पूरे संसार में है। भाषा, धर्म, वंश, संस्कृति आदि उसके कई घटक हैं। इतिहास में उपसंस्कृति के अध्ययन का (subaltern studies) नया दालन खुल गया है। इतिहास केवल राजा, उनका कुल, बड़े सेनापति और सेनाओं का नहीं होता, वह जनसाधारण का ही होता है, जो घटक हैं, उनको तोड–मरोड़कर सख्ती से एक करने की बात आज कोई मानने को तैयार नहीं है। अमेरिका में अब तक कढ़ाई का सिद्धांत था। आनेवाले सभी वंश, भाषा, धर्म के लोगों को कढ़ाई में डाल दो और कढ़ाई के नीचे अग्नि प्रज्वलित करो, उसको 'मेल्टिंग पॉट' सिद्धांत माना जाता था। लेकिन निग्रो नेता जे.सी. जॅक्सन ने कहा कि, समाज इंद्रधनुष जैसा संयुक्त समाज होता है, जिसमें सभी रंग एक दूसरे में घुलमिल जाते हैं। अमेरिका के अन्य निग्रो लोगों ने पूछा कि इंद्रधनुष में काला रंग कहाँ है। फिर मार्टिन लूथर किंग ने कहा कि, इसकी जगह सॅलड बाऊल सिद्धांत होना चाहिए। फल के सॅलड में कई किस्म के फल होते हैं, उनसबका मिलकर एक रस होता है, लेकिन हम अलग–अलग फलों को भी पहचान सकते हैं। अभी सभी देशों में सॅलड बाऊल सिद्धांत ही कायम करना होगा। पूर्वात्तर भारत के लोग पूछते हैं कि 'जन–गण–मन' राष्ट्रगीत में पंजाब–सिंधु–गुजरात मराठा द्राविड उत्कल बंग है, लेकिन नागालँड, मेघालय और अरूणाचल कहाँ है, यह सवाल अनुचित नहीं है। अभी हिंदुत्ववादी आदिवासियों की अपनी अलग उपसंस्कृति है, यह मानने को तैयार नहीं है। आर्यवंश पहले से यहाँ मौजूद है और भारत के सभी आर्यवंश के हैं, ऐसा उनका दावा है। हिटलर ने भी आर्यवंश श्रेष्ठतव का दावा करके ज्यू धर्मियों को कत्लेआम किया था। ऐसा निंद्य और

अमानवी कृत्य कहीं भी हो सकता है। इसलिए, हमें एकरंग की संस्कृति के बजाय संमिश्रित संस्कृति की बात आगे बढ़ानी होगी। भारत की एक ही हिंदू संस्कृति है, यह कहने वाले इसका परिणाम कितना भयानक हो सकता है, यह नहीं जानते। सिखों ने उनको हिंदू माननेवाले सुदर्शन जी के वक्तव्य पर आपत्ति खड़ी की। समाजवाद को बहुआयामी संस्कृति की बात चलानी होगी। सख्ती से सभी को एक ही हमात की संस्कृति में डालने के प्रयास का विरोध करना होगा। विविधता में एकता यह भारत का मूलमंत्र है। यह विविधता खत्म करने का प्रयत्न गलत साबित होगा। समाजवाद को इसकी गहराई में जाकर विचार करना होगा। इसके साथ–साथ हमें इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि 21 वीं सदी में संसार में हिंसा कैसे कम हो। संसार में अभी 1426 परमाणु बम हैं। जिसकी विध्वंस शक्ति 8 करोड़ 40 लाख किलो टी.एम.टी की है। जापान में 36 हजार किलो टी.एम.टी के बम ने दो नगरों में तीन लाख लोग मारे। संसार के आधे बम तो अमेरिका के पास हैं और आधे छह देशों के शस्त्रागार में हैं। जो पृथ्वी को कई बार पूरी तरह तबाह कर सकते हैं। परमाणु बम से जो रेडियो ऐक्टिव धूलकण फैलते हैं, उसका अनुभव चेर्नोबिल के विस्फोट के बाद विशेषकर हर बम विस्पोट के बाद मिलता ही रहता है। परमाणु बम के लिए जो व्यय होता है, उससे संसार की पूरी गरीबी और निरक्षरता हट सकती है और हर एक को शुद्ध पेय जल प्राप्त हो सकता है। भाजपा सरकार ने 'साढ़े चार लाख' करोड़ रूपयों का शस्त्रसज्जता का कार्यक्रम बनाया है लेकिन उने पास हर बालक को प्राथमिक शिक्षा देने के लिए 40 हजार करोड़ नहीं है। इस युग में हिंसा का पूजन करने वाले और पोखरन को शक्तिपीठ मानने वाले लोग संसार का भला नहीं कर रहे हैं। भारत की हर समस्या फिर चाहे वो पूर्वोत्तर भारत की हो या कश्मीर की हो, वह कानून और व्यवस्था का प्रश्न मानकर हिंसा से और कड़ाई से उसको निपटने की भाषा करने वाले राष्ट्र की सेवा नहीं कर रहे हैं। राष्ट्र में हिंसा की भावना फैलती है, तो उसका परिणाम बच्चों के मन पर भी होता है। आज स्कूलों में बच्चे एक–दूसरे का जिस तरह कत्ल करते हैं, वह इस भावना का ही परिणाम है। आज शंकर जी का दुर्जनों का विनाश करने वाला त्रिशूल बेबस और असहाय लोगों को, इतना ही नहीं, गर्भवती माताओं को और उनके

पेट में पैदा होने वाले अर्भकों को मारने वाला शस्त्र बन गया है। हिंसा का उन्माद, युद्धज्वर और वृथा शक्तिपूजा देश का नाश कर सकती है। आज अणुशस्त्र दहशतवादियों के हाथ में भी गया है। गुनहगारों के गिरोह ऐसे हत्यारों से लैस बन रहे हैं और समाज में भय फैला रहे हैं। उसके विरोध में सब समाज किस तरह उठ खड़ा हो जाएगा और निर्भयता से ऐसी चुनौतियों का सामना करेगा यह देखना समाजवादियों का काम है। हिंसा की वजह से जनतंत्र प्रणाली इतना ही नहीं, चुनावी व्यवस्था भी खत्म हो जाती है। इसके लिए संसार में समाज से हिंसा और भय का वातावरण खत्म कर देना चाहिए जिससे साधारण आदमी भी सुरक्षा महसूस करें।

इन नये संदर्भों का विचार भारतीय समाजवादी विचारधारा को करना जरूरी है। समाजवादी विचारधारा कोई अहले किताब नहीं है। यह एक प्रवाही, गतिमान और नयी–नयी परिस्थितियों का सामना करते–करते, नया–नया रूप लेनेवाली विचारधारा है। पूरे संसार में समाजवाद का रूप जैसे बदलते आया है, वैसे ही भारतीय लोकतांत्रिक समाजवाद का दर्शन भी बदलते आया है। नये संदर्भ के सामने और नयी चुनौतियों का सामना करते–करते नये रूप में खुद को ढालने की और उसको अधिक तेजस्वी और प्रखर बनाने की क्षमता समाजवादी विचारधार में अवश्य है।

7. आज मुकाबला किससे?

राष्ट्र सेवा दल की दृष्टि से लोकतांत्रिक समाजवादी विचारधारा के सामने आज दो बड़ी आपत्तियां विकराल रूप लेकर खड़ी है। एक आपत्ति का नाम है, जागतिकीकरण। जागतिकीकरण यह अंतर्राष्ट्रीय एकाधिकार पूँजीवाद का रूप है जिसका नेतृत्व अमेरिका बहुत अमानवीय रूप से कर रहा है। उसके पेट में उदारीकरण, निजीकरण तथा जागतिकीकरण है और पूरे संसार में गरीब देशों के बाजार इस अंतर्राष्ट्रीय पूँजीवाद के लिए मुक्त हो जाए, यह उनकी कामना है। पूँजीवाद हमेशा कामगारों द्वारा निर्माण की गई संपत्ति का अतिरिक्त मूल्य स्वाहा करके कामगारों का और पूरे समाज का शोषण करते बढ़ता आया है। आज का अंतर्राष्ट्रीय पूँजीवाद गरीब देशों की संपत्ति हड़प करके

परिपुष्ट बनने के प्रयास में है। डॉ. राम मनोहर लोहिया ने यह बात अपने 'मार्क्ससिज्म, गांधीज्म और सोशलिज्म' में कही तथा अपने पंचमढी के समाजवाद के नवदर्शन में पेश की थी। उनके कहने के अनुसार विकसित देशों का पूँजीवाद यह एक वर्तुल का केंद्र है, जिसके परिधि पर सैकडों गरीब देश हैं। परिधि के गरीब देशों का शोषण करके ही अंतर्राष्ट्रीय पूँजीवादी केंद्र सामर्थ्यवान बन रहा है। उसके लिए उनकी एल.पी.जी स्ट्रॅटेजी है। विकसित देशों के पास गरीब देशों में पूजीपतियों को खरीद करके उन देशों में वे अपने धन का विनिमय करते हैं और रॉयल्टी, तंत्र विज्ञान, व्यवस्थापन आदि के बहाने दो गुना से दस गुना तक पैसा वापस ले जाते हैं। यह गरीब देशों का शोषण पूरे संसार में बड़ी मात्रा में चल रहा है। उस शोषण के जरिए अंतर्राष्ट्रीय पूँजीपति गरीब देशों की नैसर्गिक संपत्ति का भी दोहन करते रहते हैं। उससे गरीब देशों की बेरोजगारी और गरीबी दिन–प्रतिदिन बढ़ती है। शिक्षा, सांस्कृतिक जीवन, आरोग्य आदि पर विदेशी कब्जा होता है। जागतिकीकरण का यह असली रूप है। उसके विरोध में भारतीय जनता को लड़ना जरूरी है। उसके साथ–साथ जमातवाद का खतरा भी भयानक रूप ले रहा है। यह बात गुजरात नरसंहार और भारत के सीमावर्ती देशों में होनेवाले दहशतवाद से स्पष्ट हो जाती है। जमातवाद, मूलतत्ववाद और दहशतवाद यह जमातवाद का ही त्रिगुणात्मक रूप है। इस रूप ने भारतीय संविधान को और उस संविधान में ग्रथित मूल्यों को चुनौती दे दी है। यदि भारत में जमातवाद और प्रबल बनेगा तो, भारत की एकता हमेशा के लिए उद्ध्वस्त हो जाएगी और भारत के टुकड़े–टुकड़े हो जाएँगे। हमने युगोस्लाविया में जमातवाद ने ही युगोस्लाविया के अनेक टुकड़े होते हुए देखे हैं। राष्ट्र सेवा दल सैनिक जिन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन में जान हथेली पर लेकर स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया, हैदराबाद, गोवा की आजादी के लिए लड़ाई की, वह राष्ट्र सेवादल कतई बरदाश्त नहीं करेगा। इसलिए राष्ट्र सेवा दल के सैनिकों ने हीरक महोत्सव में जमातवाद और जागतिकीकरण के विरोध में संघर्षरत करने का प्रण लिया है।

जमातवाद और जागतिकीकरण की चुनौतियाँ मामूली चुनौतियाँ नहीं हैं। देश के एक्के–दुक्के पुरोगामी दल उसका सामना करने में बिल्कुल असमर्थ है। इसके लिए पहले समाजवादियों की एकता जरूरी है। लेकिन, यह भी शक्ति काफी नहीं होगी। भारत के सभी पुरोगामी शक्तियों को एक जगह लाने की बहुत जरूरत है और सभी पुरोगामी दल या संगठन इस बात की आवश्यकता महसूस भी करते हैं। लेकिन, हर संगठन या दल का अपना–अपना स्वार्थ बीच में आता रहता है। यदि पुरोगामी संगठन देश के हित के लिए अपना स्वार्थ दूर रखेंगे, तो ही इन भयानक चुनौतियों का सामना करने में हम सक्षम बन जाएँगे। राष्ट्र सेवा दल को भी अपने स्तर पर पुरागामी शक्तियों को एक जगह लाने का प्रयास करना होगा। देश के लिए आज यह सबसे बड़ी जरूरत है।

8. समारोप

राष्ट्र सेवा दल का समाजवादी आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान है। राष्ट्र सेवा दल के तीनों संस्थापक श्री एस.एम.जोशी, नानासाब गोरे और शिरूभाऊ लिमये, समाजवादी आंदोलन के चोटी के नेताओं में थे। उनके साथ–साथ आचार्य जावडेकर, साने गुरूजी, आचार्य नरेंद्र देव, जयप्रकाश नारायण और डॉ. राम मनोहर लोहिया इन समाजवादियों के प्रति राष्ट्र सेवा दल सैनिकों की श्रद्धा थी। बॅ. नाथ पै तो राष्ट्र सेवा दल के एक श्रेष्ठ सैनिक ही थे। राष्ट्र सेवा दल में निर्माण हुए कई सैनिकों ने स्वतंत्रता आंदोलन और हैदराबाद मुक्ति संग्राम तथा गोवा की आजादी की लड़ाई में अहम भूमिका निभाई थी। आजादी के संग्राम में पूरा राष्ट्र सेवादल शामिल हो गया था। दूसरे महायुद्ध काल में गांधी, नेहरू, आजाद, पटेल जेलखाने में बंद थे, जब भारत का तिरंगा एक ही जगह लहरता नजर आता था। वह जगह थी राष्ट्रसेवा दल की शाखाएँ। राष्ट्र सेवा दल सैनिक हुतात्मा शिरीष कुमार का बलिदान, यह तो सेवा दल के लिए गौरवास्पद घटना है। हैदराबाद मुक्ति संग्राम के समय उसके सीमावर्ती जिलों में राष्ट्र सेवा दल ने कई शिविर आयोजित किए थे। गोवा मुक्ति संग्राम में तो हजारों सेवा दल सैनिक अपनी–अपनी टुकड़ियाँ लेकर पुर्तगालियों के खिलाफ सत्याग्रह करने के लिए गोवा में

गए थे। जब जयप्रकाश जी ने यह नारा दिया था कि ''देश के लिए एक घंटा'' और उसी समय साने गुरूजी ने 'श्रम पथक' की कल्पना राष्ट्र सेवा दल शिविर में पेश की तब, ग्रामीण पुननिर्माण के लिए राष्ट्र सेवा ने ''साने गुरूजी सेवा पथक'' निर्माण करके बहुत बड़ा उदाहरण देश के सामने रखा था। जब समाजवादी आंदोलन में फूट आ गई और उसकी दो धड़ें बन गईं तब और समाजवादी दल समाप्त होने के बाद भी राष्ट्र सेवा दल ने समाजवादी विचार प्रसार का काम शिविर, रैलियाँ, श्रम पथक, कलापथक, संवादपथक आदि के रूप में करने का अविरत प्रयास किया। हीरक महोत्सव से राष्ट्र सेवा दल ने पुरोगामी और समाजवादी शक्ति का परिचय समाज को देने का प्रयास किया। लेकिन, यह कहना जरूरी है कि राष्ट्र सेवा दल को आंबेडकरी विचार प्रवाह से ज्यादा घना रिश्ता बनाना आवश्यक था। ऐसा विश्वास है कि यह काम आगे चलकर होगा। जैसा पहले ही कहा गया, भारत के समाजवादी क्रांति का आधार दलित, आदिवासी, महिला तथा सभी गरीब वर्ग रहेगा। समाजवादी विचारधारा से अपनी निष्ठा रखनेवाले राष्ट्र सेवा दल को इसी तबके में जाकर काम करना जरूरी है। यह काम उनकी समस्याएँ हाथ में लेकर ही किया जा सकता है। इसलिए राष्ट्र सेवा दल शाखा को जनता की समस्या के आधार पर खड़ा रहना आवश्यक बन गया है। फिर यह शाखा पथनाट्य, सानेगुरुजी कथामाला, आंतरभारती, समाजवादी महिला सभा, छात्र भारती, समाजवादी अध्यापक सभा, अभ्यास मंडल, ग्रंथालय और निदर्शन आदि कार्यक्रमों के द्वारा इन समस्याओं को उठाना और उनको हल करना आदि कामों में व्यस्त करेगी। ऐसे कामों से और बालक–बालिकाएँ तथा युवक–युवतियाँ भी संघठित हो जायेगें। समाजवादी आंदोलन का आधार इसी तरह व्यापक करने का प्रयास राष्ट्र सेवा दल को करना जरूरी है। यह काम राष्ट्र सेवा दल को करना जरूरी है। यह काम राष्ट्र सेवादल अवश्य हाथ में ले लेगा।

बड़े समाजवादी चिंतक श्री मधु लिमये जी ने 'सोशलिस्ट कम्युनिस्ट इंटरॲक्शन इन इंडिया' इस किताब के अंत में समाजवाद का वर्णन करते हुए जो कहा, वह महत्व का है। मधुजी लिखते हैं, ''समाजवाद यह मानवतावादी तत्व है। समाजवाद, सामाजिक एवं

आर्थिक न्याय के लिए जूझता है। जातिकुप्रथा, विनाश, श्रम की प्रतिष्ठा, हर एक व्यक्ति तथा सकल मानवता का अप्रतिहत विकास यह समाजवाद का लक्षण है। वह स्त्री मुक्ति का पुरस्कर्ता है। चमड़े के रंग के आधार पर जो भेद किया जाता है, उसपर वह कड़ा प्रहार करता है। वह ऐसा मानता है कि एक देश से दूसरे देश का शोषण या समाज के एक विभाग से दूसरे विभाग का शोषण समाप्त होना जरूरी है। वह सहिष्णुता का पुरस्कर्ता है तथा धर्मदद्वेष या धार्मिक दुराग्रह के विरुद्ध आंदोलन खड़ा करता है। वह युद्ध या विध्वंसन का तिरस्कार करता है। न्याय प्रस्थापना और उचित हिस्सा देनेवाली व्यवस्था निर्माण करने के लिए शांतिपूर्ण एवं निःशस्त्र मार्ग का अवलंबन करना जरूरी है, ऐसा समाजवाद मानता है।

''लोकतांत्रिक, सार्वत्रिक मतदान तथा एक शासन बदलकर अपने अनिर्बंध चुनाव के अनुसार नई सरकार लाने का लोगों का अधिकार ये चीजें समाजवाद के लिए हमेशा के लिए निबद्ध है। एक दलीय सत्ता फिर वह किसी भी परदे के नीचे हो उसका विरोध वह करता है। उदारमतवादी परंपरा से प्राप्त हुई नागरी स्वतंत्रता की विरासत की रक्षा करना और उसको समृद्ध करना आवश्यक है, ऐसा उसे लगता है।''

इस समाजवाद की निर्मिति के लिए राष्ट्र सेवा दल कटिबद्ध है। राष्ट्र सेवा दल ने अपने बचपन से ही भारत में लोकतांत्रिक–समाजवादी समाज बनाने का सपना देखा है। और अपने इस सपने को सच करने का अविरत प्रयास करना राष्ट्र सेवा दल के हर सैनिक का प्रथम कर्तव्य है।

राष्ट्र सेवा दल का सपना। समता आधारित समाजनिर्मिति।।

राष्ट्र सेवा दल

वाङ्मय विभाग

निम्नलिखित किताबें बिक्री हेतु उपलब्ध हैं।

हिंदी में

		रू.
1)	राष्ट्र सेवा दल : इतिहास और कार्य ..... (डॉ. मु. ब. शहा)	100.00
2.	समाजवाद (भाई वैद्य)	20.00
3.	जनतंत्र (प्रा. विकास देशपांडे)	30.00
4.	राष्ट्रवाद (सुभाष वारे)	20.00
5.	वैज्ञानिक दृष्टिकोण	20.00

मराठी में

1.	विसाव्या शतकातील विचारप्रवाह	50.00
2.	सैनिक गीते	25.00
3.	ध्वज फडकत ठेवू या	25.00
4.	मुक्त विद्यापीठ	5.00
5.	गांधीः माणुसकीचा मूर्तिमंत गहिवर (प्रा. मधु दंडवते)	95.00
6.	बहुरुपी खट–नट : वसंत बापट (लीलाधर हेगडे)	100.00

एक साथ पाँच सौ रुपये मूल्य की किताबें खरीदने पर 25 प्रतिशत छूट मिलेगी।

भारत में समाजवादी आंदोलन के दो प्रवाह रहे। एक प्रवाह आंबेडकरी आंदोलन का है और दूसरा प्रवाह जयप्रकाशजी के नेतृत्व में निर्माण हुआ समाजवादी प्रवाह है। दूसरा प्रवाह यही समाजवादी प्रवाह है, ऐसा लगभग सभी लोग मानते रहते हैं। लेकिन मेरी दृष्टि से आंबेडकरी आंदोलन का प्रवाह एक माने में असली देशी प्रवाह है। वह हमेशा समता की संकल्पना पर बल देते आया, इतना ही नहीं उसने काफी हद तक समाजवादी कार्यक्रम का भी पुकारा किया। इसलिए, ये दोनों प्रवाह लोकतांत्रिक समाजवाद के ही प्रवाह हैं, यह मानना जरूरी है।